वर्ष : 5 अंक : 1 जनवरी-मार्च 2015 मूल्य : 25 रुपये

हिन्दी काव्य की संग्रहणीय त्रैमासिक पत्रिका

पारस परस

सृजन-स्मरण

आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री

(जन्म : 5 फरवरी, 1916 ; निधन : 7 अप्रैल, 2011)

तन चला संग, पर प्राण रहे जाते हैं !
जिनको पाकर था बेसुध, मस्त हुआ मैं,
उगते ही उगते, देखो, अस्त हुआ मैं,
हूँ सौंप रहा, निष्ठुर ! न इन्हें ठुकराना,
मेरे दिल के अरमान रहे जाते हैं !
"किसके दुराव, लूँगा स्मृति चिह्न सभी से,
कर बढ़ा कहूँगा : भूल गये न अभी से !"
था सोच रहा, अभिशाप भरे आ तब तक
हे देव, अमर वरदान रहे जाते हैं !
आओ हम सब मिल आज एक स्वर गाएँ,
रोते आएँ, पर गाते–गाते जाएँ !
मैं चला मृत्य की आँखों का आँसू बन,
मेरे जीवन के गान रहे जाते हैं !

– आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री

वर्ष : 5, समग्रांक : 16, जनवरी–मार्च, 2015 रजि. नं. यूपी एचआईएन/2011/39939

पारस-परस

हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं
की संग्रहणीय त्रैमासिक पत्रिका

अनुक्रमणिका

संरक्षक मंडल

अभिमन्यु कुमार पाठक

अरुण कुमार पाठक

बी. एल. गौड़

पंडित सुरेश नीरव

संपादक

शिवकुमार बिलगरामी

संपादकीय कार्यालय

418, मीडिया टाइम्स अपार्टमेंट
अभयखण्ड–चार, इंदिरापुरम
गाजियाबाद – 201012
मो. : 09868850099
08527762055

लेआउट एवं टाइपसेटिंगः
अभीष्ट चौधरी
मो. : 08802724123

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक द्वारा
पारस–बेला न्यास के लिए
डा॰ एल॰ पी॰ पाण्डेय द्वारा प्रकाश पैकेजर्स,
257, गोलागंज, लखनऊ तथा आप्शन प्रिन्टोफास्ट,
पटपड़गंज इन्ड. एरिया, नई दिल्ली से मुद्रित
एवं ए–1/15 रश्मिखण्ड, शारदा नगर योजना,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश से प्रकाशित

पारस–परस में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित रचनाकारों के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का रचनाओं में व्यक्त विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है । पत्रिका से संबंधित सभी विवाद लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। उपरोक्त सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।

पाठकों की पाती		2
संपादकीय		3
श्रद्धा सुमन		
गांव गया...	डा॰ अनिल कुमार पाठक	4–5
कालजयी		
बादल	पं॰ पारसनाथ पाठक 'प्रसून'	6
सबका अपना–अपना वृक्षत्त्व	नरेश मेहता	7
जीना भी एक कला है	आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री	8
सच्चाइयाँ	शमशेर बहादुर सिंह	9–10
साक्षात्कार	डॉ॰ रामदरश मिश्र	11–13
समय के सारथी		
वो	सर्वेश 'चन्दौसवी'	14
रामकुमार 'कृषक' की तीन ग़ज़लें	रामकुमार 'कृषक'	15
दण्डित कौन करेगा ?	कृष्ण मित्र	16
जिन्दगी गुलाब हो गयी	डॉ॰ अशोक अज्ञानी	17
आँखें बन्द कर लें	हितेश कुमार शर्मा	18
कमलेश भट्ट 'कमल' की दो ग़ज़लें	कमलेश भट्ट 'कमल'	19
गीतों के अँधियारे घर में	महेश सक्सेना	20
प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा...	शिवकुमार बिलगरामी	21
नारी–स्वर		
समुद्र के उस पार...	असीमा भट्ट	22
चालीस पार की औरत	कलावंती	23
बिना बाप की लड़कियाँ	नेहा नरूका	24
मेरा खुदा	कमला सिंह 'ज़ीनत'	25
एक साजिश हो रही है	अंजना वर्मा	26
प्रीति का दिनमान	शोभा दीक्षित 'भावना'	27
हौसलों की उड़ान	कंचन पाठक	28
स्वेटर	मिताली मासूम	29
नवोदित रचनाकार		
नये वर्ष का हुआ आगमन...	विनाद पाण्डेय	30
गाँव से अम्मा आयी है	इं॰ सुनील कुमार बाजपेयी	31
सुरेन्द्र अग्निहोत्री की तीन कविताएं	सुरेन्द्र अग्निहोत्री	32
मधुवेश की ग़ज़लें	मधुवेश	33
मेरी बात और है	डॉ॰ चन्द्रसेन	34
इसलिए बेचैन हूँ...	राजीव 'रियाज़' प्रतापगढ़ी'	34
वाणी–वन्दना	ब्रजवंश मिश्र	35
जागते लबों पे	सतीश मिश्र	35
स्वाइन फ्लू	डॉ॰ एस॰ सी॰ गुरूदेव	36
चैन की बंशी....	बुद्धराम 'विमल'	37
प्रणय की देवी का प्रतिबिंब	बिजेन्द्र कुमार अम्भी	38
साहित्यिक गतिविधि		
उ॰ प्र॰ राज्य कर्मचारी...	पारस परस प्रतिनिधि	39–40

पाठकों की पाती

सेवा में,
माननीय संपादक महोदय
पारस परस, लखनऊ

मैंने पारस परस का अक्टूबर-दिसम्बर, 2014 का अंक शुरू से लेकर अंत तक पढ़ा। मैं एक कविता के माध्यम से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना चाहता हूँ। कविता इस प्रकार है :-

मैं तुम्हारी ही कृपा से नित्य निर्मल हो रहा हूँ
आपकी कविता को पढ़कर मैं सुकोमल हो रहा हूँ
डा. जौहर की ठंडी - ठंडी हवा और बालकृष्ण का विप्लव गान
राही का साक्षात्कार पढ़ के, होठों पर आई मुस्कान
बालस्वरूप राही लिखतें हैं, पलकें बिछाएं तो नहीं बैठी
गीत अपनी जिंदगी..... लिखते विजय प्रसाद त्रिपाठी
गोविन्द गुलशन ने लिख डाला, दर्पण झूठ नहीं बोलेगा
गीले रंग हुए यादों के.. मन वैरागी डोलेगा
गुलो की जिंदगी का सार, गुलशन को सजाना है
जीवन का आधार उसे भी दे दो, ब्रह्मदेव शर्मा से जाना है
अजय अज्ञात की कविता.. देती है ऊँचाई माँ
कोई मिल जाए ऐसा कहती है रूपा श्री शर्मा
आखिर फिर ऐसा वादा क्यूँ, डा. अनिल कुमार पाठक
धरती का लाल लिख डाला, उदय शरण बने साधक
पारस परस के संपादक, शिवकुमार बिलगरामी
संपाकदीय अच्छा लगा, अहम नमामि, वयम नमामि

संपर्क : पंडित नमन
जी-7/120, सेक्टर-15
रोहिणी, दिल्ली-110089
मोबाईल : 9811154503

रचनाकार अपनी रचनाएं और प्रतिक्रियाएं कृपया निम्नलिखित पते पर भेजें–

संपादक : पारस–परस

418, मीडिया टाइम्स अपार्टमेंट
अभय खण्ड–चार, इंदिरापुरम
गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)

e-mail
paarasparas.lucknow@gmail.com
shivkumarbilgrami99@gmail.com

संपादकीय

शब्दकोष में कभी शिक्षा का अर्थ देखें। शिक्षा का अर्थ है - व्यवस्थित रूप से किसी संस्था में शिक्षक अथवा गुरू से ऐसे ज्ञान और विद्या की प्राप्ति जो हमारे अंदर दक्षता और निपुणता के साथ-साथ चारित्रिक और मानसिक शक्तियों का विकास करे। इसके साथ ही व्याकरण में, अक्षरों या वर्णों का सही उच्चारण और लेखन भी शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। उपरोक्त आधार पर किसी शिक्षित व्यक्ति में तीन बातों का होना आवश्यक है- (1) वह अपने व्यवसाय में दक्ष और निपुण हो (2) उसका चारित्रिक और मानसिक विकास हुआ हो; और (3) वह अपने भावों और विचारों को लेखन अथवा मौखिक संवाद के माध्यम से अच्छी तरह व्यक्त करने की क्षमता रखता हो।

हमारे शिक्षण संस्थानों में आजकल व्यावसायिक दक्षता और निपुणता पर तो खूब जोर दिया जा रहा है, लेकिन अन्य दो बातों पर अपेक्षित बल नहीं दिया जा रहा हैं। चारित्रिक और मानसिक विकास का तात्पर्य है - निर्बल वर्गों अर्थात् वृद्धों, महिलाओं, बच्चों, नि:शक्तों और विपन्नों की जरूरतों और मान सम्मान को ध्यान में रखकर किया जाने वाला आचरण। तीसरी बात, शब्द हमारे विचारों के वाहक हैं। शब्दों का शुद्ध उच्चारण और उपयुक्त प्रयोग, भावों और विचारों के संप्रेषण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है। इसलिए भाषा ज्ञान को शिक्षा का अभिन्न अंग बताया गया है।

समाज साहित्य लेखन से जुड़े लोगों से यह अपेक्षा रखता है कि वे पूर्णरूपेण शिक्षित हों - अर्थात् उनमें व्यावसायिक निपुणता और दक्षता तो हो ही, इसके साथ ही वे चारित्रिक और मानसिक रूप से विकसित हों और उनका भाषा ज्ञान असाधारण हो। रचनाकार स्वयं को शिक्षा की उपरोक्त कसौटियों पर कसें और एक बार यह आत्मचिंतन अवश्य करें कि क्या हम शिक्षा के उक्त मानकों पर खरे उतर रहे हैं ? क्या हम गद्य-पद्य लेखन की बारीकियों से भली भाँति परिचित हैं ? क्या हमने लेखन हेतु वांछित निपुणता और दक्षता हासिल कर ली है ? क्या शिक्षा ने हमारे चारित्रिक और मानसिक विकास में योगदान दिया है ? क्या हमारे चारित्रिक और मानसिक विकास से समाज का कोई वर्ग लाभान्वित हुआ ? क्या हमने भाषागत ज्ञान अच्छी तरह प्राप्त कर लिया है ? यदि नहीं, तो क्या हमें इस बात का बोध है कि इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए हमें उक्त मानकों पर खरा उतरना पड़ेगा।

जब से फेसबुक, ट्विटर, ब्लाग लेखन और सोशलमीडिया का प्रचलन बढ़ा है तब से एक बात उत्तरोत्तर हमारे संज्ञान में आती जा रही है कि साहित्य और काव्य लेखन का कार्य हम वांछित गंभीरता और उत्तरदायित्त्व से नहीं कर रहे हैं। जिन बातों पर हम स्वयं अमल नहीं करते, उनके लिए दूसरों से क्यों अपेक्षा रखते हैं। जिन आदर्शों को हम स्वयं व्यवहार में नहीं लाते उन्हें अपने लेखन की विषय वस्तु बनाकर उन पर अमल का 'प्रवचन' क्यों देते हैं। इससे हमारा लेखन / सृजन बहुत हल्का और अविश्वसनीय हो रहा है। ऐसे साहित्य को प्रथमत: पाठक पढते नहीं, और पढते हैं तो गंभीरता से नहीं लेते। ऐसे अल्पकालिक, अविश्वसनीय और शून्य प्रभाव वाले साहित्य सृजन से किसी का मनोरथ सिद्ध नहीं होता। न तो साहित्यकार का और न ही साहित्य प्रेमियों का। अच्छा साहित्यकार बनने के लिए आवश्यक है कि हम शिक्षा के उपरोक्त मानकों पर खरा उतरें। इतना ही नहीं, हम अपने आचरण और सोच में अंतर न रखें। अपनी सोच में दूसरों को जगह दें, दूसरों के हित को सर्वोपरि रखें। पहले मैं नहीं, पहले 'आप' की संस्कृति पर अमल करें.... तभी हम अच्छे साहित्य सृजन की दिशा में आगे बढ़ सकेंगें।

पारस-परस पत्रिका के प्रेरणा स्रोत स्वर्गीय पं॰ पारसनाथ पाठक 'प्रसून' की 23 जनवरी को सातवीं पुण्यतिथि है। उन्होंने बिना किसी स्वार्थ लिप्सा या अनुराग के जो काव्य सृजन किया है, हमारे लिए अनुकरणीय है। उनके काव्य का पठन-पाठन ही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि है। उनकी नि:स्वार्थ सोच ही सद्साहित्य का मूल है। वही हमें बड़ा साहित्यकार बनने के लिए प्रेरित करती है। 'बाबूजी' की स्मृतियों को शत् शत् नमन ।

पारस परस के इस अंक में जिन रचनाकारों की रचनाओं को प्रकाशित किया गया है, हम उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करते हैं।

शिवकुमार बिलगरामी

गांव गया...

-डा॰ अनिल कुमार पाठक

गांव गया,
यादों के साथ,
यादों के पास,

x x x

बन्द किवाड़ें,
जिन पर
लटक रहे हैं
ताले अलीगढ़ी,

बार-बार मन यह कोसे
कैसी थी मनहूस घड़ी
छोड़ गये जब हमे अकेले बाबू माई।
जंग लगे ताले चाभी में
कुछ पल जंग चली
जीत-हार की खातिर
रार और तकरार बढ़ी
फिर सकुचाकर औ' शरमाकर
खुला द्वितालक अलीगढ़ी।

x x x

दरवाजे के भीतर गलियारा
फिर आंगन सूना-सूना
बीता जिसमें अपना बचपन
देख हुआ दुख दूना
रहता था जो हरा-भरा
खुशियों से हरपल आह्लादित
वीरान पड़ा, जैसे हो अभिशापित
टहल रहे अब निर्भय होकर
झींगुर, गोजर, बिसतुइया,
जगह-जगह बिलनी के घर,
छत्तों में बर्र, ततैया,
नहीं रखी है कसर किसी ने
वल्मीक बनायी दीमक ने
भी इक कोने में।

x x x

चले गये जब
हमें छोड़कर बाबूजी
माई ने भी उनका साथ निभाया,
जनम-जनम के रिश्ते-नाते से बँधाने का
साथ-साथ उन्हें बाबू का भाया।
छोड़ चली घर द्वार
रूप नया धार
बाबू जी के पास
जहाँ कहीं भी होंगे वे अजर-अमर।

x x x

बिन दोनों के सूना यह घर-आँगन
आखिर हो भी क्यों न ऐसा
नहीं रहा जब इनका रखवाला
माई-बाबू सा
बरसों से न झाड़ न साफ-सफाई
रंग-रोगन बिन खड़ी दीवालें
नहीं लिपाई-नहीं पुताई।

x x x

अब तो बस यादें ही यादें
उस अतीत की इस हिय में
उमड़ रही है बादल जैसी

पर बरस नहीं पाती लय में
देख रसोंई याद आ गई
माँ की, दु:ख से दिल भर आया
भर आयीं पथरायी आँखें,
फिर से कातर दिल कुम्हलाया
ना जाने क्यूँ
रह-रह कर लगता
बना रही माँ सुमधुर पूये
कितनी सुखद सुहानी यादें
अर्न्तमन को मेरे छुये।

x x x

पर यह क्या?
यह तो है शायद इक सपना
जो अब कभी न होगा अपना।
नजर घूमती घर के अन्दर ....
जगह-जगह मकड़ी के जाले
फंसे हुए जिनमें बहुतेरे
कीट पतंगे भोले-भाले।
लगता है मिल गयी सभी को
आजादी इस घर में
शायद मैं भी लौटा हूँ वर्षों के बाद
यादों के इस घर में
वह अतीत, बचपन की यादें,
प्यारी थी जब माँ की डाट,
चुटहिल कभी नहीं करते थे
गालों पर वे पड़ते हाथ।
अपना भविष्य हो सुन्दर, सुखमय
कुछ कर पाऊँ अपने,
घर, जग की खातिर
कोई भी पल न हो दुखमय
रोशन कर कुल-नाम कीर्ति
बन जाऊँ कुलदीपक।
बचपन की वह याद मन में उभर रही
लगा तभी जैसे कुछ माँ घर में ढूँढ़ रही,
शायद ढूंढ रही हो माई
तिलवा, गुड़ और पिटुरा,
या फिर लइया चिउरा

x x x

दरवाजे पर दस्तक से टूटा सपना
पहले लगा कि आये बाबू
लेकिन यह भी तो है सपना,
फिर सँभला आ, बाहर देखा
खड़े पड़ोसी, परिवारीजन
पूछ रहे हैं कुशल क्षेम वे
समझ रहा मैं खुद को दोषी
छोड़ दिया क्यूँ मैंने आखिर
इस घर आना-जाना
कभी तो आया कर,
क्या बोलूँ औ कैसे बोलूँ
करूँ मैं कौन बहाना,
बिन दीया बाती के घर
लगता है सूना-सूना
सुनकर उनकी बातें लगता
इनका दु:ख मुझसे दूना।
इन लोगों ने भी तो खोया
अपना एक पड़ोसी
जो रिश्तों का कदरदान था,
सुख-दु:ख का था साथी
रोशन करता था इनकी दुनिया
जैसे दीप की बाती।

❖❖❖

बादल

-पं० पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

अब न तुम्हें जाने दूंगा बादल।

चंपे की नव-पंखुड़ियों पर,

बेला की मधुमय कलियों पर,

बाँध सुरभि की जंजीरों से,

और झँकोरुँगा तुमको बरसाऊँगा बादल!

अब न तुम्हें जाने दूँगा बादल!

चंचल सरिता के मृदुजल पर,

तट के सूखे सिकता कण पर,

उलझा कर पथ की दूबों में,

और लहर पर तुमको लहराऊँगा बादल!

अब न तुम्हें जाने दूंगा बादल!

कभी उठा कर तुङ्ग श्रृंग पर,

कभी झुका कर सागर तट पर,

बैठा कर तुमको वातचक्र पर

गाऊँगा मैं और नचाऊँगा तुमको बादल!

अब न तुम्हें जाने दूंगा बादल!!

❖❖❖

नरेश मेहता

नरेश मेहता का जन्म 15 फरवरी, 1922 में मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र के शाजापुर कस्बे में हुआ था। आपने आल इंडिया रेडियो, इलाहाबाद में कार्यक्रम अधिकारी के रूप में कार्य किया। नरेश मेहता जी की भाषा संस्कृतनिष्ठ होने के साथ–साथ विषयानुकूल, भावपूर्ण और प्रवाहमयी है। इनके काव्य में शिल्प और अभिव्यंजन के स्तर पर ताज़गी और नयापन है। आप दूसरा सप्तक के प्रमुख कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। आपको उत्कृष्ट साहित्यिक सेवाओं के लिए 1992 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

आपका निधन 22 नवम्बर 2000 में हुआ।

सबका अपना-अपना वृक्षत्त्व है

(1)

माधवी के नीचे बैठा था
कि हठात् विशाखा हवा आयी
और फूलों का एक गुच्छ
मुझ पर झर उठा;
माधवी का यह वृक्षत्व
मुझे आकण्ठ सुगंधित कर गया।

उस दिन
एक भिखारी ने भीख के लिए ही तो गुहारा था
और मैंने द्वाराचार में उसे क्या दिया ?-
उपेक्षा, तिरस्कार
और शायद ढेर से अपशब्द ।
मेरे वृक्षत्व के इन फूलों ने
निश्चय ही उसे कुछ तो किया ही होगा,
पर सुगंधित तो नहीं किया।

सबका अपना-अपना वृक्षत्व है

(2)

किरन-धेनुएँ...

उदयाचल से किरन-धेनुएँ
हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
पूँछ उठाए चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली
दिखा रहे पथ इस भूमा का
सारस, सुना-सुना बोली

गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता
किरन-धेनुओं का समूह यह
आया अन्धकार चरता,
नभ की आम्रछाँह में बैठा
बजा रहा वंशी रखवाला।

ग्वालिन-सी ले दूब मधुर
वसुधा हँस-हँस कर गले मिली
चमका अपने स्वर्ण सींग वे
अब शैलों से उतर चलीं।

बरस रहा आलोक-दूध है
खेतों खलिहानों में
जीवन की नव किरन फूटती
मकई औ' धानों में
सरिताओं में सोम दुह रहा
वह अहीर मतवाला।

❖❖❖

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री का जन्म 5 फरवरी, 1916 को बिहार के गया जिला के मैगरा गाँव में हुआ था। उन्हें छायावादोत्तर काल के प्रमुख कवि और लेखक के रूप में जाना जाता है। उन्होंने काव्य के क्षेत्र में कुछ नये प्रयोग किये और कई छन्दबद्ध काव्य–कथाएं भी लिखीं, जो उनके 'गाथा' नामक काव्य संग्रह में प्रकाशित हुईं। उन्होंने 'राधा' जैसे श्रेष्ठ काव्य नाटक की रचना भी की। उन्होंने हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में साहित्य रचना की है। उन्हें उनके साहित्यिक योगदान के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा भारत भारती सम्मान से सम्मानित किया गया। वर्ष 2010 में भारत सरकार द्वारा उन्हें 'पद्मश्री' सम्मान से सम्मानित किया लेकिन उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया।

7 अप्रैल, 2011 को मुजफ्फरपुर के निराला निकेतन में आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री ने अंतिम साँस ली।

जीना भी एक कला है

जीना भी एक कला है,
इसे बिना जाने हीं, मानव बनने कौन चला है ?
फिसले नहीं, चलें, चट्टानों पर इतनी मनमानी,
आँख मूँद तोड़े गुलाब, कुछ चुभे न क्या नादानी ?
अजी, शिखर पर जो चढ़ना है तो कुछ संकट झेलो,
चुभने दो दो-चार खार, जी भर गुलाब फिर ले लो,
तनिक रुको, क्यों हो हताश, दुनिया क्या भला बला है ?
जीना भी एक कला है,

कितनी साधें हों पूरी, तुम रोज बढ़ाते जाते,
कौन तुम्हारी बात सुने तुम बातें बहुत बनाते,
माना प्रथम तुम्हीं आये थे, पर इसके क्या मानी ?
उतने तो घट सिर्फ तुम्हारे, जितने नद में पानी,
और कई प्यासे, इनका भी सूखा हुआ गला है,
जीना भी एक कला है,

बहुत जोर से बोले हो, स्वर इसीलिए धीमा है

घबराओ मत, उन्नति की भी बंधी हुई सीमा है
शिशिर समझ हिम बहुत न पीना, इसकी उष्ण प्रकृति है
सुख-दुःख, आग बर्फ दोनों से बनी हुई संसृति है
तपन ताप से नहीं, तुहिन से कोमल कमल जला है
जीना भी एक कला है ।

❖❖❖

शमशेर बहादुर सिंह

शमशेर बहादुर सिंह का जन्म 13 जनवरी, 1911 को देहरादून में हुआ था। इनकी पहचान आधुनिक हिन्दी कविता के प्रगतिशील कवि के रूप में है और यह प्रयोग और नई कविता के प्रथम पंक्ति के कवियों में से हैं। इनकी कविता में ठोस विचार तत्त्व के बजाय अभिव्यक्ति की वक्रता द्वारा वर्ण विग्रह और वर्ण संधि के आधार पर नई शब्द योजना के प्रयोग से चामत्कारिक आघात देने की प्रवृत्ति पाई गई है। इनके कई काव्य संग्रह और निबन्ध संग्रह प्रकाशित हुए है। इन्हें इनके साहित्यिक योगदान के लिए मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, कबीर सम्मान और साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

शमशेर बहादुर सिंह का निधन 12 मई, 1993 को अहमदाबाद में हुआ।

सच्चाइयाँ

जो गंगा के गोमुख से मोती की तरह बिखरती रहती हैं
हिमाचल की बफीर्ली चोटी पर चाँदी के उन्मुक्त नाचते
परों में झिलमिलाती रहती है
जो एक हजार रंगों के मोतियों का
खिलखिलाता समंदर है।
उमंगों से भरी फूलों की जवान कश्तियाँ
कि बसंत के नये प्रभात सागर में छोड़ दी गयी हैं।
ये पूरब-पश्चिम मेरी आत्मा के ताने-बाने हैं
मैंने एशिया की सतरंगी किरनों को
अपनी दिशाओं के गिर्द लपेट लिया
और मैं योरप और अमरीका की नर्म आँच की धूप-छाँव पर
बहुत हौले-हौले नाच रहा हूँ
सब संस्कृतियाँ मेरे सरगम में विभोर हैं
क्योंकि मैं हृदय की सच्ची सुख-शांति का राग हूँ
बहुत आदिम, बहुत अभिनव।
हम एक साथ उषा के मधुर अधर बन उठे
सुलग उठे हैं
सब एक साथ ढाई अरब धड़कनों में बज उठे हैं
सिम्फोनिक आनंद की तरह
यह हमारी गाती हुई एकता
संसार के पंचपरमेश्वर का मुकुट पहन
अमरता के सिंहासन पर आज हमारा
अखिल लोक-प्रेसिडेंट बन उठी है।
देखो न हकीकत हमारे समय की कि जिसमें
होमर एक हिंदी कवि सरदार जाफरी को
इशारे से अपने करीब बुला रहा है
कि जिसमें
फैयाज खाँ बिटाफ़ेन के कान में कुछ कह रहा है
मैंने समझा कि संगीत की कोई अमर लता हिल उठी
मैं शेक्सपियर का ऊँचा माथा उज्जैन की घाटियों में
झलकता हुआ देख रहा हूँ
और कालिदास को वैमर के कुंजों में विहार करते
और आज तो मेरा टेगोर मेरा हाफिज
मेरा तुलसी मेरा ग़ालिब
एक-एक मेरे दिल के जगमग पावर-हाउस का
कुशल ऑपरेटर हैं।
आज सब तुम्हारे ही लिए शांति का युग चाहते हैं
मेरी कुटूबुटू
तुम्हारे ही लिए मेरे प्रतिभाशाली भाई तेजबहादुर
मेरे गुलाब की कलियों-से हँसते खेलते बच्चों
तुम्हारे ही लिए, तुम्हारे ही लिए
मेरे दोस्तों, जिनसे जिंदगी में मानी पैदा होते हैं
और उस निश्छल प्रेम के लिए
जो माँ की मूर्ति है
और उस अमर परमशक्ति के लिए जो पिता का रूप है।
हर घर में सुख
शांति का युग
हर छोटा-बड़ा हर नया-पुराना हर आज-कल-परसों के
आगे और पीछे का युग
शांति की स्निग्ध कला में डूबा हुआ
क्योंकि इसी कला का नाम जीवन की भरी-पूरी गति है।
मुझे अमरीका का लिबर्टी स्टैचू उतना ही प्यारा है
जितना मास्को का लाल तारा
और मेरे दिल में पेकिंग का स्वर्गीय महल
मक्का-मदीना से कम पवित्र नहीं
मैं काशी में उन आर्यों का शंखनाद सुनता हूँ
जो वोल्गा से आये
मेरी देहली में प्रहलाद की तपस्याएँ दोनों दुनियाओं की
चौखट पर
युद्ध के हिरण्यकशिप को चीर रही हैं।

कालजयी

यह कौन मेरी धरती की शांति की
आत्मा का कुरबान हो गया है
अभी सत्य की खोज तो बाकी ही थी
यह एक विशाल अनुभव की चीनी दीवार
उठती ही बढ़ती आ रही है
उसकी ईंटें धड़कते हुए सुर्ख दिल हैं
ये सच्चाइयाँ बहुत गहरी नींवों में जाग रही हैं
वो इतिहास की अनुभूतियाँ हैं
मैंने सोवियत यूसुफ के सीने पर कान रखकर सुना है।
आज मैंने गोर्की को होरी के आँगन में देखा
और ताज के साये में राजर्षि कुंग को पाया
लिंकन के हाथ में हाथ दिए हुए
और अरागों की आँखों में नया इतिहास
मेरे दिल की कहानी की सुर्खी बन गया
मैं जोश की वह मस्ती हूँ जो नेरुदा की भवों से
जमा की तरह टकराती है
वह मेरा नेरुदा जो दुनिया के शांति पोस्ट आफिस का
प्यारा और सच्चा कासिद
वह मेरा जोश कि दुनिया का मस्त आशिक
मैं पंत के कुमार छायावादी सावन-भादों की चोट हूँ
हिलोर लेते वर्ष पर
मैं निराला के राम का एक आँसू
जो तीसरे महायुद्ध के कठिन लौह पर्दों को
एटमी सुई-सा पार कर गया पाताल तक
और वहीं उसको रोक दिया
मैं सिर्फ एक महान विजय का
इंदीवर जनता की आँख में
जो शांति की पवित्रम आत्मा है।
पश्चिम में काले और सफेद फूल हैं
और पूरब में पीले और लाल
उत्तर में नीले कई रंग के और हमारे यहाँ चंपई-साँवले
और दुनिया में हरियाली कहाँ नहीं
जहाँ भी आसमान बादलों से जरा भी पीछे जाते हों
और आज गुलदस्तों में रंग-रंग के फूल सजे हुए हैं
और आसमान इन खुशियों का आईना हैं।
आज न्यूयार्क के स्काईक्रेपरों पर
शांति के 'डवों' और उसके राजहंसों ने
एक मीठे उजले सुख का हलका-सा अँधेरा
और शोर पैदा कर दिया है
और अब वो आर्जन्टीना की सिम्त
अतलांतिक को पार कर रहे हैं
पाल राब्सन ने नयी दिल्ली से नये अमरीका की
एक विशाल सिंफनी ब्राडकास्ट की है
और उदयशंकर ने दक्षिणी अफ्रीका में
नयी अजंता को स्अेज का उतारा है
यह महान नृत्य वह महान स्वन कला और संगीत
मेरा है यानी हर अदना-से-अदना इनसान का
बिलकुल अपना निजी।
युद्ध के नक्शों को कैंची से काटकर कोरियायी बच्चों ने
झिलमिली फूलपत्तों की रोशन फानूसें बना ली हैं
और हथियारों का स्टील अैर लोहा हजारों
देशों को एक-दूसरे से
मिलानेवाली रेलों के जाल में बिछ गया है
और ये बच्चे उन पर दौड़ती हुई
रेलों के डिब्बों की खिड़कियों से
हमारी ओर झाँक रहे हैं
वह फौलाद और लोहा खिलौनों मिठाइयों और किताबों
से लदे स्टीमरों के रूप में
नदियों की सार्थक सजावट बन गया है
या विशाल ट्रेक्टर-कंबाइन और फैक्टरी-मशीनों के हृदय में
नवीन छंद और लय का प्रयोग कर रहा है।
यह सुख का भविष्य शांति की आँखों में ही वर्तमान है
इन आँखों से हम सब अपनी उम्मीदों की आँखें सेंक रहे हैं
ये आँखें हमारे दिल में रोशन और हमारी पूजा का फल हैं
ये आँखें हमारे कानून का सही चमकता हुआ मतलब
और हमारे अधिकारों की ज्योति से भरी शक्ति हैं
ये आँखे हमारे माता-पिता की आत्मा
और हमारे बच्चों का दिल हैं
ये आँखें हमारे इतिहास की वाणी
और हमारी कला का सच्चा सपना हैं
ये आँखें हमारा अपना नूर और पवित्रता है
ये आँखें ही अमर सपनों की हकीकत और
हकीकत का अमर सपना हैं
इनको देख पाना ही अपने-आपको देख पाना है,
समझ पाना है।
हम मनाते हैं कि हमारे नेता इनको देख रहे हों।

❖❖❖

जहाँ आप पहुँचे छलाँगे लगाकर, वहाँ मैं भी पहुँचा मगर धीरे-धीरे : डॉ॰ रामदरश मिश्र

डॉ॰ रामदरश मिश्र आज के दौर के हिन्दी के सर्वाधिक प्रतिष्ठत साहित्यकार हैं। इनकी लम्बी साहित्य–यात्रा समय के कई मोड़ो से गुजरी है और निरंतर एक नूतनता की छवि को प्राप्त होती रही हैं। ये जितने समर्थ कवि हैं, उससे कहीं अधिक समर्थ उपन्यासकार और कहानीकार भी हैं। इनके साहित्यिक सृजन में सादगी और मूल्यधर्मिता की सहज अभिव्यक्ति है। इनकी कविताओं का लगभग सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इनकी रचनाओं को देश के कई विश्वविद्यालयों ने अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है।

हिन्दी साहित्य संसार के ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्त्व से अपने पाठकों को रूबरू कराने के लिए पारस–परस के संपादक शिवकुमार बिलगरामी ने इस अंक के लिए डॉ॰ रामदरश मिश्र का साक्षात्कार लिया। इस साक्षात्कार में उनके जीवन के कुछ ऐसे अनसुने पहलुओं को उद्घाटित किया गया है जिसे पढ़कर हमारे पाठकों को गर्व और आनन्द की अनुभूति होगी।

प्रश्न : आपने किस उम्र में लिखना शुरू किया था ? ऐसी कौन सी बाते हैं जिन्होंने आपको कविता लेखन की ओर प्रेरित किया ?

उत्तर : न जाने क्यों बचपन से ही मेरा मन इस ओर आकर्षित होता था कि मैं कविता जैसी कोई चीज़ लिखूँ। जब प्राइमरी स्कूल में था तब पाठ्य पुस्तक की कविताएं पढकर और लोकगीत सुनकर मन होता था कि मैं भी कुछ लिखूँ। लिखने की कोशिश भी करता था किन्तु एक दो पंक्ति से आगे नहीं बढ पाता था। कई वर्षों तक भीतर ही भीतर लिखने की तड़प चलती रही लेकिन कुछ लिख नही सका। मुझे याद है जब मैं दर्ज़ा 6 में था तब मेरे एक सहपाठी ने कहा था कि उसके गाँव का एक लड़का शहर में पढ़ता है और कविता भी लिखता है। उसकी बात सुनकर मैं एकदम उर्मगित हो उठा और खुद से कहा कि अब मैं भी कविता लिखूँगा। संयोग से उस दिन स्कूल के पास कांग्रेस की सभा थी। मैंने उसी पर एक कविता लिखी और यहीं से कविता का स्रोत प्रवाहित होने लगा। मेरे गाँव के पास के एक गाँव में कवि मदनेश जी रहते थे उनके निर्देशन में छंद का अभ्यास करने लगा। मदनेश जी मेरी कविताएं सँवारने में मदद करते थे।

प्रश्न : आपका जन्म 15 अगस्त, 1924 का है। आपकी उम्र 15 अगस्त, 1947 को 23 वर्ष की रही होगी ? भरपूर युवावस्था! उस समय आपके मन में राष्ट्रभक्ति और स्वतंत्रता के लिए जो भावनाएं उमड़ती थीं - क्या आपने उन्हें अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किया ?

उत्तर : मेरे घर के लोग कांग्रेसी थे। मेरे पिताजी कांग्रेस के स्वयंसेवी थे। बड़े भाई भी कांग्रेस से संबद्ध थे। देश और परिवार दोनों का प्रभाव मुझ पर था। मैंने देशभक्ति और स्वाधीनता आंदोलन पर बहुत सी कविताएं लिखीं। मुझे याद है सन् 1942 के आंदोलन के समय मैंने मंच से राष्ट्रीयता से ओत प्रोत कई कविताएं सुनाईं थीं। इसी में से किसी घनाक्षरी की एक पंक्ति याद आ रही है- **तिमिर घनेरा हिन्द मेरा भी तजेगा अब।** मुझे याद है 42 के आंदोलन में, बरहज कस्बे से जहाँ मैं पढ़ता था, भागकर गोरखपुर गया था। जहाँ मैं ठहरा था वहाँ अनेक लोगों ने आग्रह किया कि मैं कुछ कविताएं सुनाऊँ। वहाँ मैंने राष्ट्रप्रेम की कई कविताएं सुनाई। वहाँ उपस्थित श्रोताओं में से एक ने कहा–आप ये कविताएं मत सुनाइये अन्यथा संकट में पड़ जायेंगे। आप जानते हैं मैं कौन हूँ ? मैं सी आई डी का आदमी हूँ। जब मैं बनारस में था वहाँ के अखबारों में मेरी राष्ट्रप्रेम से ओत प्रोत अनेक कविताएं छपीं।

लेकिन वे कविताएं आरंभिक और कच्ची थीं इसलिए दो एक को छोड़कर मैंने इन्हें अपने काव्य संग्रह में स्थान नहीं दिया।

प्रश्न : मैं नेट पर आपसे संबंधित सामग्री 'सर्च' कर रहा था। उसी पर कहीं आपका एक कथन देखा - अवसर चूकते रहना मेरी नियति बन गई है ?

उत्तर : दो पंक्तियाँ लिख लीजिये : - **जहाँ आप पहुँचे छलाँगे लगाकर**

वहाँ मैं भी पहुँचा मगर धीरे-धीरे

मेरे अवसर चूकने की दो स्थितियाँ रहीं - एक तो मेरा स्वभाव, दूसरे मेरी नियति। अब देखिये मैं उन तमाम चीज़ों की प्राप्ति के लिए अध्यवसाय नहीं करता हूँ जिन्हें पाने के लिए लोग तरह-तरह के छलछंद किया करते हैं । सवाल चाहें शिक्षा प्राप्ति का हो, चाहें पद प्राप्ति और पदोन्नति का हो या पुरस्कार प्राप्ति का, मैं सही अवसर पर इन्हें पाने से चूकता रहा। शिक्षा के संबंध में एक बात और है। इसके माार्ग में मेरे गाँव और घर का पिछड़ापन भी उत्तरदायी है। अब देखिये मिडिल स्कूल पास करने के बाद मुझे मैट्रिक करना चाहिए था। किंन्तु उस पिछड़े परिवेश में अंग्रेजी पढ़ने की कोई कल्पना ही नहीं थी.. इसीलिए मैं विशारद, विशेषयोग्यता और साहित्यरत्न की प्रक्रिया में अपना समय बिताता रहा.. लेकिन बाद में 22 वर्ष की आयु में मैट्रिक किया फिर 28 वर्ष की उम्र में एम ए किया और 32 वर्ष की उम्र में मुझे गुजरात में पहली बार नौकरी मिली। दिल्ली में जब आया तब मैं अपनी सारी योग्यता और नाम के बावजूद रीडर नहीं बन सका । रीडर बनने में काफी लम्बा समय लगा..। इसी तरह रिटायर होने से मात्र एक साल पहले प्रोफेसर बना। इस विलम्ब में नियति की भी भूमिका रही है। जहाँ असफलता में मेरी योग्यता उत्तरदायी नही हैं वहाँ नियति उत्तर दायी है। 2012 में मुझे **व्यास सम्मान** देने की घोषणा हुई लेकिन मिला अप्रैल 2013 में, डॉ॰ नरेन्द्र कोहली के साथ। उन्हें बिल्कुल इंतज़ार नहीं करना पडा । यहाँ मैं नियति के बारे में एक बात ज़रूर कहना चाहूँगा। शुरू में लगता था कि नियति मेरे साथ क्रूर है पर बाद में पता चलता था कि उसने मुझे धक्का देकर आगे ठेला है।

प्रश्न : आजादी के पहले कई स्वनाम धन्य कवियों ने ऐसे गीत रचे जो सीधे लोगों के दिलों में उतर गये और कई गीत तो जनमानस में पूरी तरह रच बस गये थे। गीतों और छन्दबद्ध कविताओं ने जन आंदोलन में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। आज़ादी के बाद ऐसा क्या हुआ कि कवियों को यह लगने लगा कि कविता को आम आदमी तक पहुँचाने के लिए इसे छंदमुक्त करना जरूरी है ?

उत्तर : एक पहलू यह है कि हमारी कविता जन-जन तक जाये। और दूसरा पहलू यह है कि जन जन हमारी कविता में आये । आज़ादी के आंदोलन के दौरान ऐसे कई गीत और कविताएं लिखी गईं जिनसे आंदोलन को बल मिला। लेकिन निराला ने छंद को तोड़ा। उन्होंने छंदमुक्त गीतों की रचना की जिन्हें हम नवगीत के नाम से जानते हैं। मेरा मानना है कि छन्दबद्ध कविता, कविता का एक आयाम है, पर यह कविता का समग्र नहीं है। आज़ादी के बाद थी बच्चन, दिनकर और नरेन्द्र शर्मा जैसे लोग छन्द में ही लिख रहे थे... जिसे हम प्रयोगवादी कविता कहते हैं । उस दौर के कवियों ने भी बहुत अच्छी रचनाएं दी हैं... मैं सोचता हूँ कवि को कहीं भी आग्रही नहीं होना चाहिए। यदि उसे लगता है कोई कथ्य गीत की माँग कर रहा है, छंद की माँग कर रहा है तो उसे गीत, छन्द में ही लिखा जाना चाहिए। बहुत से कवियों ने यही किया है। गद्य छन्द में जो कविताएं लिखी जा रही हैं। उनकी अपनी बड़ी ताक़त है। उनमें अनेक भावों / विचारों का संश्लेषण होता है जो एक नये रूप में सामने आता है। इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। कविता एक व्यापक मंच है। प्रत्येक कवि को अपनी दृष्टि के अनुरूप वस्तु का विधान करने की छूट मिलनी चाहिए।

प्रश्न : क्या आपको लगता है कि हिन्दी में ग़ज़ल का प्रचलन इसलिए जोर पकड़ रहा है क्योंकि छन्द में लिखने वालों का हिन्दी कविता ने मार्ग अवरुद्ध किया ?

उत्तर : जो छन्द में लिख रहे थे अब वे हिन्दी ग़ज़ल की ओर लौट रहे हैं। नई कविता में लिखने वाला इधर नहीं लौट रहा है। ज़िन्दगी

के यथार्थ बहुआयामी हैं। लोग अपनी अपनी रूचि और सामर्थ्य के अनुसार अपने कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए विविध प्रकार की शैलियाँ और छन्द अपनाते हैं।

प्रश्न : आजकल राजनीति, व्यापार, कला सभी के केन्द्र में आम आदमी होता जा रहा है। साहित्य में और विशेषकर हिन्दी कविता में तो बहुत पहले से आम आदमी केन्द्र में रहा है। लेकिन फिर भी क्या वज़ह है कि आम आदमी कविता से कट गया है ?

उत्तर : मैंने शुरू में कहा था कि जन के लिए कविता लिखना एक बात है और कविता का जन के साथ हो जाना दूसरी बात है। ये सही है कि आजकल आम आदमी पर या आम जीवन के अनेक पक्षों पर कविताएं लिखी जा रही हैं, लेकिन जन उनके साथ नहीं हो पा रहा है। इसकी दो वजह हैं - एक तो यह वज़ह है कि जन पर लिखी जा रही कविताएं अपनी अभिव्यक्ति में बहुत दुरूह हैं। इनमें अत्यधिक दुरूह बिम्बों और प्रतीकों का प्रयोग हो रहा है। इन्हें आम आदमी क्या समकालीन कवि भी नहीं समझ पा रहे हैं। आम आदमी पर कविताएं ऐसी होनी चाहिए जिनमें विषय संबंधी घनत्त्व तो हो लेकिन अभिव्यक्ति में ऐसी सादगी हो कि कविताएं दूर तक पहुँचे। दूसरी बात यह है कि, आम आदमी काफी हद तक अशिक्षित है। उसे पता ही नहीं कविता क्या होती है। कविताओं मे उसके बारे में क्या लिखा जा रहा है..., हिन्दी बेल्ट में तो काफी पढ़े लिखे लोग भी साहित्य नहीं पढ़ते। ...एक बात और है ...आम आदमी पर कविता लिखना उन लोगों के लिए फैशन है जो कविता तो लिखते हैं लेकिन वो आम आदमी की ज़िन्दगी से कोई सरोकार नहीं रखते।

प्रश्न : विगत में देखने में आया है कि पदमश्री / पद्मविभूषण जैसे सम्मान हिन्दी साहित्य के मुख्यधारा के कवियों से हटकर दिये जा रहे हैं...

उत्तर : आपने जिन सम्मानों की चर्चा की है उनके महत्त्व को यूँ समझ लीजिए कि वो न तो नागार्जुन, न अज्ञेय और न ही किसी बड़े कवि और साहित्यकार को दिये गये हैं। ये राजनीतिक सम्मान है और जो राजनीतिक रूप से सक्रिय कवि / साहित्यकार हैं उन्हें ये सम्मान मिल जाता है।

प्रश्न : आपकी कोई रचना जिसे आज के परिवेश में भी आप उपयुक्त पाते हों ?

उत्तर : बहुत सारी रचनाएं हैं। इन्हीं में से एक है - **सूर्य ढलता ही नहीं।** मैं आज भी इसे गुनगुनाता हूँ। मुझे अच्छा लगता है। इसमें एक यथार्थ हैं।

सूर्य ढलता ही नही

चाहत हूँ, कुछ लिखूँ, पर कुछ निकलता ही नहीं है
दोस्त, भीतर आपके कोई विकलता ही नहीं है!

आप बैठे हैं अंधेरे में लदे टूटे पलों से
बंद अपने में अकेले, दूर सारी हलचलों से
हैं जलाए जा रहे बिन तेल का दीपक निरन्तर
चिड़चिड़ाकर कह रहे-'कम्बख़्त, जलता ही नहीं है!'

बदलियाँ घिरतीं, हवाएँ काँपती, रोता अंधेरा
लोग गिरते, टूटते हैं, खोजते फिरते बसेरा
किन्तु रह-रहकर सफ़र में, गीत गा पड़ता उजाला
यह कला का लोक, इसमें सूर्य ढलता ही नहीं है!

तब लिखेंगे आप जब भीतर कहीं जीवन बजेगा
दूसरों के सुख-दुखों से आपका होना सजेगा
टूट जाते एक साबुत रोशनी की खोज में जो
जानते हैं-ज़िन्दगी केवल सफ़लता ही नहीं है!

बात छोटी या बड़ी हो, आँच में खुद की जली हो
दूसरों जैसी नहीं, आकार में निज के ढली हो
है अदब का घर, सियासत का नहीं बाज़ार यह तो
झूठ का सिक्का चमाचम यहाँ चलता ही नहीं है!

❖❖❖

वो

-'सर्वेश' चन्दौसवी

सत्यता का पतन, अर्चना का दमन, हर घड़ी विष वमन वो किए जा रहे।
आस्था का दलन, भावना का दहन, दुष्टता को नमन वो किए जा रहे।।

त्याग से दूर हैं, दर्प से चूर हैं।
अग्नि-पथ पर चलें द्वेष मन में लिए।।
विद्वता के लिए निर्दयी-क्रूर हैं।
अनगिनत छद्म के रोग तन में लिए।।

वासना की चुभन, नग्नता की छुअन, काम-पीड़ित हनन वो किए जा रहे।
सत्यता का पतन, अर्चना का दमन...

मर्म जानें नहीं विश्व-बन्धुत्व का।
हर समय आपदाएँ उभारें नई।।
कंटकाकीर्ण कर दें सहज मार्ग को।
उलझनें नित धरा पर उतारें नई।।

तीव्र दुख की अगन, क्रुद्ध मन की जलन, धर्म को निर्वसन वो किए जा रहे।
सत्यता का पतन, अर्चना का दमन....

स्वार्थ में लिप्त ऐसे हुए रात-दिन।
कुछ सुझाई न दे शुभ-अशुभ अब उन्हें।।
लालसा ने कसीं पट्टियाँ नेत्र पर।
कुछ दिखाई न दे शुभ-अशुभ अब उन्हें।।

कुछ न चिन्तन-मनन, व्यर्थ झूठे वचन, पाप हर दिन सघन वो किए जा रहे।
सत्यता का पतन, अर्चना का दमन...

संपर्क : 0965446346

❖❖❖

रामकुमार 'कृषक' की तीन ग़ज़लें

(1)

दुख कहाँ से आ रहे बतालाइए
और कब तक जा रहे बतलाइए

भूख कब से द्वार पर बैठी हुई
आप कब से खा रहे बतलाइए

काम से जो लोग वापस आ रहे
रो रहे या गा रहे बतलाइए

काम कीजे चाह फल की छोड़िए
आप क्यूँ समझा रहे बतलाइए

मानते हैं आप हैं जागे हुए
पूछते हम क्या रहे बतलाइए

(2)

लोग रहते थे जिन मकानों में
ख़ूब बदले हैं वे दुकानों में

कर्ज ही नुस्ख-ए-तरक़्क़ी है
चलिए चलते हैं शफ़ाख़ानों में

ख़ास मेहमाँ है पेप्सी-कोला
ख़ास हम भी हैं मेज़बानों में

इश्क़ डॉलर से रश्क डॉलर से
रूप रुपए का नाबदानों में

जिस्म सोना है रुह तो राँगा
कद्रो-कीमत है कद्रदानों में

रोज़ उड़िए उकाब की नाईं
पंख जिसके भी हों उड़ानों में

लोग बेकार नापते सड़कें
कार ढलती है कारख़ानों में

(3)

हम नहीं खाते हमें बाज़ार खाता है
आजकल अपना यही चीज़ों से नाता है

पेट काटा हो गई खासी बचत घर में
है कहाँ चेहरा मुखौटा मुस्कुराता है

नाम इसका और उसके दस्तख़त हम पर
चेक बियरर है जिसे मिलते भुनाता है

है ख़रीददारी हमारी सब उधारी पर
बेचनेवाला हमें बिकना सिखाता है

सामने दिखता नही ठगिया हमें यों तो
हाँ, कोई भीतर ठहाका सा लगाता है

संपर्क : सी-3/59, नागार्जुन नगर,
सादतपुर विस्तार, दिल्ली - 110094
मोबाईल : 09868935366

❖❖❖

दण्डित कौन करेगा ?

-कृष्ण मित्र

वर्णित हैं जो घृणित कथायें, कुत्सित लज्जाजनक प्रथाएं
शोषण की अतिशय अनपेक्षित, उत्पीड़न की निर्ममतायें
बेपर्दा करती हैं खुलकर, भ्रष्ट सियासदानों को
दण्डित कौन करेगा आखिर, इन मुजरिम शैतानों को

पूछ रही मधूमिता कि जिसको, मौत मिली बटमारों से
सत्ता पर हावी अस्मत के दुश्मन ठेकेदारों से
वहशी इन खूंखार दरिन्दों, की कहानियों के किस्से
नग्न वासना की अनचाही घटनायें सब के हिस्से
घुट-घुट मर रहीं फिजायें, लिखलिख कर अपराध कथा
और विवशता भी गाती उस, भंवरी की सौन्दर्य व्यथा
अन्धी गलियों में गुम होते अबला के अरमानों को

बेकुसूर नैनाओं के शव, मिलें जहाँ तन्दूरों में
कविता, शशी की मजबूरी, जहाँ रिसती हो नासूरों में
जहाँ महत्वाकाँक्षाओं के स्वर दबकर रह जाते हों
काण्डाओं के जुल्म गीतिका, को कुछ भी कह जाते हों
जहाँ नग्नता का ताण्डव, गुँजाता हो मयख़ानों को

नारी के विरुद्ध उच्छृंखल, होते हों षडयन्त्र जहाँ
न्याय, नियम, न्यायालय बेबस, असफल शासन तन्त्र जहाँ
व्यभिचारी सूबेदारों से, डरी डरी है मानवता
उद्दण्ड नशाखोरों में, भी अब जाग रही हो दानवता
मुमकिन नहीं रोकना शायद इन जालिम तूफानों को

गुनाहगार करता गुनाह, है छूट मिली जब चोरों को
कौन रोक पाया समाज के, दुश्मन-रिश्वत-खोरों को
चीख-चीख थक गये हजारे, लोकपाल तक नहीं मिला
जन्तर-मन्तर के अनशन से भ्रष्ट प्रशासन नहीं हिला
योग गुरु भी छोड़ गये हैं, लीला के मैदानों को
दण्डित कौन करेगा आखिर, इन मुजरिम शैतानों को

❖❖❖

संपर्क : 09818201978

जिन्दगी गुलाब हो गयी

-डॉ॰ अशोक अज्ञानी

महक उठा अंग-अंग पाकर नव पाँखुरी।
गीता गा उठी सहसा, साँसों की बाँसुरी।
क्षण भर के लिए ही सही बात लाजवाब हो गयी।
आपने गुलाब क्या दिया जिन्दगी गुलाब हो गयी।

जहाँ हुआ मोह भरी गन्ध का सृजन।
मिली वहीं दर्द भरी शूल की चुभन।
जाने क्यों उलझ गये प्रीति के नयन।
एक जगह ठहर गया ये भटका मन।

घिर आयी घटा सघन हो जैसे सावनी।
झूम उठी मन्द-मन्द ज्यों बयार फागुनी।
सिहर उठे तटों के अधर लहर बेहिसाब हो गयी।
आपने गुलाब क्या दिया जिन्दगी गुलाब हो गयी।

नेति नेति नीति हुई, नेह में नवल।
मचल उठी तितली सी काया चंचल।
मौसम का जादू इस तरह गया चल।
लोभी भँवरों ने भी दल लिया बदल।

हृदय पटल सिहर गया किसी अटल सन्त का।
मायावी झोंका आया सरस बसन्त का।
एक मिलन हेतु भावना फिर से बेताब हो गयी।
आपने गुलाब क्या दिया जिन्दगी गुलाब हो गयी।

जायें ना टूट कहीं, प्रीति के नियम।
खो न दे कहीं सरिता अपनी सरगम।
जान गयी आत्मा अनीति का मरम।
धार लिया धैर्य से कबीर का धरम।

अज्ञानी राधा जब हो बैठी बावरी।
ओढ़ लिया कान्हा ने संयम की चादरी।
अम्बर में चाँद छिप गया चाहत आदाब हो गयी।
आपने गुलाब क्या दिया जिन्दगी गुलाब हो गयी।

संपर्क : 09911948694

❖❖❖

आँखें बन्द कर लें

-हितेश कुमार शर्मा

हवा में दुर्गन्ध-सी है, कहीं मानस गन्ध-सी है
जिस कलम से लिख रहा था, वह कलम भी बन्द-सी है

लग रहा है कहीं मानवता मरी है,
या किसी ने अस्मिता नंगी करी है
फिर किसी ने हरण सीता का किया है
या कहीं पर द्रौपदी व्याकुल खड़ी है

मैं बहुत मजबूर क्यों हूँ, स्वयं से भी दूर क्यों हूँ
लग रहा है आँधियों का समय से अनुबन्ध भी है

भावनाएँ आज क्यों गन्दी हुई हैं
आत्माएँ किसलिए बन्दी हुई हैं
सच कहेगा जो उसे मृत्यु मिलेगी
विधिक धाराएँ सभी अन्धी हुई हैं

न्याय अंधा हो गया है, मात्र धन्धा हो गया है
पारदर्शी मान्यताओं पर लगा प्रतिबन्ध भी है

जागता है कौन जब हम सो रहे हैं
पा रहा है कौन, जब हम खो रहे हैं
भावना सम्भावना में द्वन्द्व-सा है
हँस रहा है समय, हम ही रो रहे हैं

कौन बाँधेगा समय को, कौन रोकेगा प्रलय को
पुनः सिंहासन की बन्दी, भीष्म की सौगन्ध भी है

संपर्क : 09319935979

❖❖❖

कमलेश भट्ट 'कमल' की दो ग़ज़लें

(1)

पिंजरे में भी उसका कलरव बोलेगा
पंछी तो जब तक है संभव, बोलेगा

कोई डिग्री बेशक उसके पास न हो
पर कर्मों से उसका अनुभव बोलेगा

नफ़रत की बारूद अगर भर दी जाए
ज़र्रा-ज़र्रा केवल ताण्डव बोलेगा

उसने भी अब छककर मदिरा पी ली है
अब उसके भीतर का दानव बोलेगा

जो जितना ही प्रेम करेगा राधा से
वह उतना ही माधव-माधव बोलेगा

जीते जी तो उफ़ न कभी की ज़ालिम से
उसने क्या-क्या जुल्म सहे, शव बोलेगा

आमद के हैं शेर अगर सब सचमुच ही
ग़ज़लों में शब्दों का वैभव बोलेगा

पानी-खाद जड़ों में देकर देखो तो
पत्ता-पत्ता पल्लव-पल्लव बोलेगा

(2)

उठाकर फेंक देता हूँ उसे मैं कूड़े-कचरे में
जब भी आ जाती है उम्मीदों के रस्ते में

चबा सकता है छोटी से बड़ी हर एक कठिनाई
मिली है आदमी को इतनी ताकत उसके जबड़े में

मज़ा ही और ही जीने का, कुछ ख़तरे उठाकर भी
यहाँ है कौन जो रहता नहीं हर वक्त ख़तरे में

हवस भरने नहीं देती है पेट इन्सान का अक्सर
नहीं तो भूख का क्या भूख तो मिट जाये टुकड़े में

हज़ारों बन्दिशें होंगी तो होंगी जिस्म पर, लेकिन
जुबाँ को बन्द कर सकता नहीं है कोई पिंजरे में

वो गहराई हो सागर की, कि हों ऊँचाइयाँ नभ की
लिखी इन्सान की जाँबाज़ियाँ है चप्पे-चप्पे में

जो इसकी शान में झुकते हैं, हो जाते हैं और ऊँचे
सिफ़त कुछ इस तरह की पाई जाती है तिरंगे में

संपर्क : 09968296694

❖❖❖

गीतों के अँधियारे घर में

-महेश सक्सेना

अब ग़ज़लों के दरवाजों पर, बज रही मधुर शहनाई है
गीतों के अँधियारे घर में, चहुँ ओर उदासी छाई है

हो रहे लुप्त रसिया, बन्ने, कजरी, मल्हार, विलीन हुईं
घटिया कविताएँ, तुकबन्दी, अब मंचों पर आसीन हुईं
विस्मृति में छन्द गए जब से, आ गए मंच पर गीत नए
अब तो प्रकीर्ण रचनाओं पर, अद्‌भुत बहार ही छाई है

अब तो चाची, ताई, नानी, चकिया पर ग़ज़लें गाएँगी
माताएँ भी निज शिशुओं को, ग़ज़लें गाकर बहलाएँगी
घर की बहुएँ घर-आँगन में, जब भी नाचेंगी-गाएँगी
वे गीत न गाकर के अब तो ग़जलों के शे'र सुनाएँगी
झूठी प्रसिद्धि के चक्कर में, कवि भूल गया कविताई है

लगता है कवि के भावों में, अब गीत नहीं आ पाएँगे
केवल ग़ज़लों के मिसरे ही, अब होठों पर मुस्काएँगे
लहरों-कूलों के प्रणय-गीत, शायद ही अब सुन पाएँगे
झरनों के गीतों से हम सब, लगता वंचित रह जाएँगे
साहित्य-सिंधु में ये कैसी घनघोर सुनामी आई है

अब कोयल, मैना बुलबुल भी, क्या गाकर हमें सुनाएँगी
छोटे बच्चों से परियाँ भी, जाने कैसे बतियाएँगी
गज़लें गाकर के गायक भी, कैसे अब दीप जलाएँगे
मेघों से जाने वे कैसे, अब जल-वर्षा करवाएँगे
हम सबको आज मनन करके, करनी इस पर सुनवाई है

संपर्क : 07042574700

❖❖❖

प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा...

- शिवकुमार बिलगरामी

खिड़की से मत कूद के आना, बंद किंवाड़े तोड़ के आना ।।
प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा, सारे वैभव छोड़ के आना ।।

प्रेम-डगर है राह कँटीली, मित्र तुम्हारा साथ न देंगे ।
हाथ बढ़ाते लोग मिलेंगे, हाथों में पर हाथ न देंगे ।
अपने पैरों से कहना तुम, काँटो पर वो चलना सीखें ।
जलने वाले सड़कों पर हैं, ये तुमको फुटपाथ न देंगे ।

प्रेम समर्थक खुद को कहते, इनका भंडा फोड़ के आना ।
प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा.....

प्रेम नहीं है सुख की बारिश, ये दु:ख का अभ्यास कराये ।
ये न दिखाये कल का सपना, ये कल का इतिहास बताये ।
प्रेम किया है जिसने जग में, उसके अनुभव पूछ के आना ।
प्रेम नहीं है अमृत जैसा, अक्सर जगको रास न आये ।

प्रेम पढ़ा है जिन ग्रंथों में, उनके पन्ने मोड़ के आना ।
प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा.....

मेरी सूनी पर्णकुटी में, खिड़की की तुम आस न रखना ।
गर्म हवा से तपते तन में, ठन्डे जल की प्यास न रखना ।
अपना मन भी छल सकता है, अपने ही दृढ़ विश्वासों को ।
मन की बात समझ खुद लेना, मुझमें तुम विश्वास न रखना ।

घाटा, लाभ तुम्हें क्या होगा, गुणा-भाग सब जोड़ के आना ।
प्रेम अगर है लक्ष्य तुम्हारा.....

समुद्र के उस पार...

-असीमा भट्ट

अभी अभी जो गया है
अपना हाथ तुम्हारे हाथ से खींच कर...
तुम्हें रोता हुआ
बिलकुल अकेला छोड़कर
जानता था
जी नहीं पाओगी
अकेली!
नहीं रह पाओगी दुनिया के
इस विशाल भीड़ भरे समुद्र में
तुम रोती हुई बार बार यही पूछती हो
कहाँ गलती हुई
क्या भूल की तुमने...

कुछ भी नहीं
जाने वाले कभी वजह नहीं बताया करते।
जिन्हें जाना होता है वो किसी भी बहाने से
जाते हैं।
जैसे जाना ही हो उनकी नियति
बस इतना जान लो
तुमने कोई
गलती नहीं की
गलती थी तो सिर्फ इतनी कि
तुमने प्यार करने की भूल की।

नहीं! नहीं!
अब और मत रोना
मत बुलाना उसे अपने प्यार का वास्ता देकर
'जो नहीं जानते वफा क्या है'
तुम उदास होकर खुद को मत देना दंड
दीवारों से गले लगकर रोते हुए
अपने आँसू जाया मत करना...
तुम जैसी पता नहीं कितनी हैं
इस वक्त भी जो मेरी इन पंक्तियों को
पढ़ रही हो और रो रही हो
मैं जानती हूँ
अच्छी तरह जानती हूँ
कितनी ठगी सी रह जाती है मासूम प्रेमिकाएँ
जब टूटता है उनका प्यार किसी प्यारे खिलौने सा

टूट जाने दो।
तुम मत टूटना
हरगिज नहीं कि
तुम काट लो अपनी कलाई की नसें
और खाकर नींद की गोलियाँ
खत्म कर लो अपने आपको
तुम्हारी कमजोरी वो जानते हैं
इसीलिए तो तुम्हें कमजोर बनाते हैं
सबसे नाजुक पल में
वो तुम पर वार करते हैं
तोड़ देते हैं तुम्हें
अंदर/बाहर से
उस वक्त जब तुम्हे उनकी
सबसे ज्यादा जरूरत होती है

भूल कर सब कुछ और खिलो
फूलों की की तरह
पहले से ज्यादा सुंदर सजो
नाज ओ अदा से इतराओ
महको/चहको/नाचो/गाओ
उल्लास मनाओ
अपने होने का
अपने सुंदर होने का
हँसो, खूब हँसो और खुश रहो

तुम्हारे दुश्मन सबसे ज्यादा
तुम्हारी खुशी से आतंकित होते हैं

अकेली नहीं हो तुम
और भी कई हैं तुम जैसी
जो समुद्र के उस पार
ढूँढ रही हैं अपना प्राचीन प्यार
सात पालों की नाव पर
दूर मल्लाहों के साथ
आज रात कोई गा रहा है...

संपर्क : 09967883856

❖❖❖

चालीस पार की औरत

-कलावंती

किसी बरसात की
घनघोर बारिशवाली रात
एक चालीस
पार की औरत
भीगती हुई थरथराती है
कुछ अघोरी आवाजें
हर वक्त उसका पीछा करती हैं
यह बरगद की जटा पकड़कर
झूलनेवाली डायनों की आवाजें हैं
वे हर अमावस की रात
बरगद की जड़ें पकड़कर
खेलती हैं छुआ–छुई का खेल

चालीस पार की औरत को लगता है
ठीक बरगद की तरह ही ठहर गई है उसकी जिंदगी भी
वे जहाँ हैं वहाँ से हिल भी नहीं सकतीं
कभी कभी उन्हें लगता है
बरगद की झूलती हुई जड़ें
उनके ही खुले हुए केश हैं
रातभर अपनी चिंताओं और कुंठाओं के साथ
वे ही उनमें झूलती हैं।

कभी कभी बड़ी खतरनाक होती है
यह चालीस पार की औरत
वह तुम्हें ठीक ठीक पहचानती है जिसे
तुम नहीं पढ़ा सकते चालीस का पहाड़ा
क्योंकि वह खुद को भी अच्छी तरह पहचानती है
वह समझती है जीवन का ऊँच नीच
जानती है कहाँ लपेटेंगे उसे पंक कीच
वह तुम्हारे छल पहचानती है
और हँसती है एक निश्छल हँसी
वह घूमती है तीनों लोकों में
तीनों युगों में – त्रेता, द्वापर और कलियुग।
बचाए रहती है अपने हिस्से का सतयुग
वह पानी पिला भी सकती है
और पानी उतार भी सकती है
चालीस पार की औरत के पास होती है सत्ता
उसके अपने संविधान के साथ।
बड़ी बुद्दार हैं, खुदमुख्तार हैं ये

(2)

लड़की

लड़की भागती है
सपनों में, डायरी में
लड़की घर से भागती है, घर की तलाश में।
लड़की देखती है उड़ती पतंगें और तौलती है पाँव।
उसके देह से निकली खुशबू फैलती है
घर आँगन तुलसी और देहरी तक।
बाबूजी की चिंताओं सी ताड़ हुई,
अम्मा की खीझ में पहाड़ हुई,
लड़की घुटनों पर सिर डाले
उलझे उलझे सपनों में, आधी सोती, आधी जागती
एकदिन जब उसके मन के दरवाजे होंगे साझीदार
सोचती है,
और खिड़कियाँ गवाह।
वह दूब से उसका हरापन माँग लाएगी,
सूरज से उधार लेगी रोशनी।
चिड़िया से पूछेगी दिशा,
और आसमान का नीला रंग
उसके दुपट्टे में सिमट आएगा

संपर्क : kalawati2@gmail.com
मो॰ : 09771484961

❖❖❖

बिना बाप की लड़कियाँ

-नेहा नरूका

होली के दिन
जब हम सब हमउम्र लड़कियों की आँखें
रहतीं पिचकारियों और गुलाल पर
तब उनकी जीभ लपलपा रही होती
गुझियों के आकार पर
बिलकुल वैसे ही
जैसे प्रेमचंद्र की बूड़ी काकी ।
अनुमान लगाती हैं कोठरी के भीतर
दही, पूरी, कचौरी का गर्माहट भरा स्वाद
न मिलने पर चाटती हैं वे भी
जूठी थाली
जो छोड़ गए हैं चचा आधा खाकर
संतोषी माता का व्रत
हर शुक्रवार को रखा जाता
शक्कर के मीठे पराठे
और पनीले दूध के लोभ में
घर में सब चाय पीते थे
केवल उन्हें ही नसीब नहीं थी चाय
चाय पीएँगी तो बाँधने लगेंगी कपड़ा
जल्दी ही करना पड़ेगा खसम का जुगाड़
अमूमन कंजूस और कर्कस अइया के कथन पर
सूख जातीं थीं उनकी बढ़तीं छातियाँ
अठारह साल से पहले इनका ब्याह निपट जाए
घरभर को ही नहीं
गाँवभर को भी थी
उनकी चिंता
बिना बाप की लड़कियाँ थीं वे ।
स्कूल जातीं
तो उनके साथ स्कूल जाते थे
उनके बब्बा, ताऊ, चच्चा
लग्गा-तग्गा भईया...
कहीं वे पढ़ने की जगह कबड्डी तो नहीं खेल रहीं
घर में अइया, महतारी, ताइयाँ, चाचियाँ
गाँवभर की भौजाइयाँ, बहनें...
देती रहतीं उन्हें सीख
लली फूँक-फूँककर पैर रखियो
बिना बाप की लरकिनें बहुत जल्दी बदनाम हो जाती हैं
उन्हें लगता उनके कंधों पर
पुरखों की ढाई किलो की पगड़ियाँ
रखी रहती हैं हरदम ।
पगड़ियों के बोझ से झुक गए थे उनके कंधे
इसलिए बिना बाप की लड़कियाँ
झुककर चलती थीं
उनके ब्याह पर गाँवभर के आदमी-औरत
गँठबँधना करवा के पाँव पूजने आए
पंडित जी की जेब भर गई रुपयों से
बिना बाप की लड़कियों के हाथ में आ गए
कई जोड़ी बिछिया और बेसर
उनकी विदा पर बहुत रोना-पिटना हुआ
महतारी तो बेहोश हो गई
दर्शन दे गया था उसे
स्वर्ग से आर्शीवाद देता लड़कियों का बाप
मंडप के चारों कोनों मे बैठी औरतों
अइया के साथ पोंछ रहीं थीं आँसू
यह कहते...
बिना बाप की लड़कियाँ थीं
चलो आज हिल्ले लग गईं ।

संपर्क : nehaexpression@gmail.com
मो॰ : 08552882326

❖❖❖

मेरा ख़ुदा

-कमला सिंह 'ज़ीनत'

नहीं जाती हूँ
किसी भी मंदिर में बार-बार
नहीं जाती हूँ
किसी भी मन्नत वाले मज़ार पर
लेकिन हाँ
दिल के बहुत ही क़रीब पाती हूँ
अपने ख़ुद के एक उस ख़ुदा को
उस ईश्वर को
जो मेरा है अपना-सा
दिन की शुरूआत हो या रात की तन्हाई
घर के बाहर और अंदर भी
लिखने के दौर और ख़ामोशी में भी
पहला शब्द मेरे ख़ुदा का उतरता है
तभी तो ख़ुश हूँ मैं
यह सुकून ही तो है कि मैं नास्तिक नहीं
हर उँगली के जवाब में
गढ़ लिया है मैंने भी अपने हुनर का
केवल एक ख़ुदा
मन के इस दयार में मेरे रहता है वो
न तो उसे चढ़ावा चाहिए
न ही वह चिराग़ी माँगता है
उसे तो बस प्यार की चादर
उसे तो बस प्यार की ख़ुश्बू
उसे तो बस प्यार की पुकार
उसे तो बस प्यार की भूख है
मेरा ख़ुदा बस मुझे चाहता है
बस मुझे
हमेशा, हमेशा के लिये
मैंने अपने ख़ुदा, अपने ईश्वर को चाहा है
जाओ, अब ख़बर कर दो
इस जग में, उस दुनिया में
और सारे संसार में भी
मैं नास्तिक नहीं हूँ
एक मेरा अपना-सा ख़ुदा भी है
सच
एक ख़ुदा भी है मेरा अपना-सा।

(2)

धुआँ-धुआँ

सिगरेट कहाँ है इमरोज़
सुलगाओ न
सुनो, दो सुलगाना
एक मेरे और दूसरी अपने लिए
आओ बैठो मेरे पास
कुछ अपनी कहें, कुछ तुम्हारी सुनें
दुनिया का दिल बहुत जला चुके हम
अब अपना दिल जलाएँ
क्या हुआ
पता है इमरोज़
यह धुआँ देखो, ज़रा ग़ौर से देखो इसे
ऊपर की ओर उठकर लुप्त हो रहा है
यह मैं हूँ
अरे वाह ! ये मेरा भी आख़िरी कश है
और तुम्हारा भी
ये भी एक इत्तेफ़ाक़
सब कुछ धुआँ-धुआँ
धुआँ-धुआँ।

संपर्क : 09958931939

❖❖❖

एक साजिश हो रही है

-अंजना वर्मा

अब वह अड़तीस पूरे करेगी
चलते-चलते
दिमाग में एक फिल्म की तरह
वह अपनी ही काया देखने लगती है
देखती रहती है
यह कौन है और कोट और पैंट में ?
हाथों में लैपटॉप का बैग लिए ?
अंकिता नाम है इसका
अंकिता मैडम
हठात् कोई बात नहीं कर सकता मैडम से
चेहरे पर बहुराष्ट्रीय संस्कृति की छाप
बना देती है कि कमी किस बात की ?
पद, अपार्टमेंट, गाड़ी, बैंक बैलेंस
सब कुछ तो है!
रोंएँ फुलाए चिड़िया-सी फूल उठती है वह
लेकिन फिर तुरंत ही
अपने दिवास्वप्न में वह देखती है अपने गाल-
परिपक्व घीये-से रुखे हो गए हैं ।
बचपन से पिता कहते थे
''यह मेरी बेटी नहीं, बेटा है''
माँ तो कहने ही लगी
''मेरी राजा बेटा''
वह बन भी गई बेटी से बेटा
और बन गई राजा;
किसी की रानी नहीं बन पाई अब तक
पर अब ये ही शब्द डराने लगे हैं उसे
उसे शिद्दत से महसूस होता है
कि वर्षों से शापा जाता रहा है उसे
हर दिन
दिन में कई-कई बार
पहले जो संबोधन
उसे पंख दे देता था उड़ने के लिए
आज वही संबोधन
शहतीरों का दर्द दे जाता है

(2)

इसी सरगम की लौ से

माँ हँसती है
अपनी गोद के लाल को देखकर
और खुशी में भरकर
चूम लेती है उसके गाल
यह शाश्वत कविता रचती है
एक अनपढ़ माँ भी
हर बार जब वह उसे गुदगुदाती है
हँसा-हँसाकर खेलाती है
तो सिखाती जाती है प्यार का गीत
अपने दुधमुँहे को
उसका लाड़ला भी
कोई शब्द बोलने से पहले
जमीन पर पैर धरकर खड़ा होने से भी पहले
अपनी थरथराती उँगलियों से
पकड़ता है माँ का आँचल
उसकी हँसी में मिलाता है
अपने बिना दाँत वाले मुँह की खिलखिलाहट
वह सीखता है ढाई अक्षर
शुरू करता है जीवन का आलाप
इसी सरगम की लौ से जलते हैं
किताबों की दुनिया के अक्षर-दीये
और पृथ्वी मुस्कुराती रहती है

संपर्क : 09572991995

❖❖❖

प्रीति का दिनमान

-शोभा दीक्षित 'भावना'

(1)

त्याग कितना जर्जरित है आज जग में,
टिमटिमाता आस्था का है सितारा ।
प्रीति का दिनमान चमकेगा सुनिश्चित,
जगमगायेगा सकल संसार प्यारा ।

जिस तरफ देखो वहाँ निजता खड़ी है,
प्रेम की वेदी यहाँ सूनी पड़ी है ।
कालिमा से घिर रहीं आकाश-गंगा-
सूर्य की ओजस्विता फीकी पड़ी है ।
खो नहीं जाना गहनतम में मुसाफिर,
एक दिन मिल जायेगा मंजिल किनारा ।
प्रीति का दिनमान चमकेगा सुनिश्चित,
जगमगायेगा सकल संसार प्यारा ।

यूँ तो गहरी झील में है प्यास बसती,
तृप्ति और विश्वास से है रिक्त धरती ।
अर्थ की भाषा निरंतर गूँजती है-
वेदना अपने हृदय में मौन रहती ।
जग हलाहल से भरा माना जलधि है,
पर नहीं इसका अभी अमृत भी खारा ।
प्रीति का दिनमान चमकेगा सुनिश्चित-
जगमगायेगा सकल संसार प्यारा ।

अश्रुओं से ''भावना'' उर धो रही है,
चेतना नैराश्य आगे सो रही है ।
हो रहा मन का तमस अब और गहरा-
बुद्धि भी तो क्षुद्रता ही बो रही है ।
निज-परिधि से जब निकल पाओगे साथी,
तब बनेगा सार्थक उत्तर तुम्हारा ।
प्रीति का दिनमान चमकेगा सुनिश्चित,
जगमगायेगा सकल संसार प्यारा ।

(2)

प्रणय का आधार

साँझ का दीपक तुम्हीं हो, प्रात का सूरज तुम्हीं ।
तुमसे मिलके जिंदगी कितनी सुहानी हो गई ।

प्राण को जीवंत करती,
मोहिनी चितवन तुम्हारी।
बोल में मिसरी घुली-सी,
बावरी धड़कन हमारी ।

कृष्ण हो तुम, प्रीति अपनी राधा-रानी हो गई ।
तुमसे मिलके जिंदगी कितनी सुहानी हो गई ।

चूड़ियों की खनक हो तुम,
स्वप्न का साकार हो ।
प्रीति की दहलीज पावन,
प्रणय का आधार हो ।

तुम मिले तो खुद-ब-खुद जग से बेगानी हो गई ।
तुमसे मिलके जिंदगी कितनी सुहानी हो गई ।

कठिन जीवन-राह है,
पर हो सहारा एक तुम ।
गहन अँधियारों का सूरज,
चाँद तारा रूप तुम ।

घुमड़ कर कारी बदरिया, पानी-पानी हो गई ।
तुमसे मिलके जिंदगी कितनी सुहानी हो गई ।

सज गई उर में महावर,
रच गई मन में हिना ।
जिंदगी क्या, श्वाँस तक,
दुश्वार मुझको तुम बिना ।

इक तुम्हारे प्रेम में, ''भावना'' दिवानी हो गई ।
तुमसे मिलके जिंदगी कितनी सुहानी हो गई ।

❖❖❖

संपर्क : 09454410576

हौसलों की उड़ान

-कंचन पाठक

(1)

अखिल असीम विराट क्षितिज में
भरने दो खुलकर हौसलों को उड़ान
सक्षम जो कर लो उच्छिन्न हदय को
तो कदमों तले होंगे दोनों जहान !!

इन्सान हैं गलती तो होती रहेगी
जलती पर अंतस की ज्योति रहेगी
है ठोकर तो होती सबक देने को बस
तो क्या याद कर आँखें रोती रहेगी ?
मजबूत कर लो खुदी को अगर तो
संग है तुम्हारे समूचा वितान
सक्षम जो कर लो उच्छिन्न हदय को
तो कदमों तले होंगे दोनों जहान !!

बीता जो वो हो गया भूत है अब
क्यूँ करते उसे याद दोबारा तुम तब
सुनो संभावनाओं की विस्तृत नदी से
लहर चुनने में देर लगती ही है कब
चलो उठ के जल्दी समय ना गँवाओ
सफलता सुनाएगी स्वयं तुमको गान
सक्षम जो कर लो उच्छिन्न उदय को
तो कदमों तले होंगे दोनों जहान !!

पतित धरणी हो देती नवता को न्योता
पतझड़ में पेड़ों के पत्तों का कम्पन
नई कोंपलें आई करने को कौतुक
भू-पर्यंक में सृष्टि की लीला को चुम्बन
डूबी है तू कौन-सी सोच में री ?
कि आता है रजनी के बाद ही बिहान
सक्षम जो कर लो उच्छिन्न हृदय को
तो कदमों तले होंगे दोनों जहान !!

नए वर्ष में कुछ नया लक्ष्य कर लो
नई आससीपज से दामन को भर लो
चुन-चुन के सुलझा लो जड़ता की गाँठें
जो होगा सो होगा तुम कोशिश तो कर लो
फैला के पंखों के झूले में उड़ जाओ
नहीं दूर ज्यादा खुला आसमान
सक्षम जो कर लो उच्छिन्न उदय को
तो कदमों तले होंगे दोनों जहान !!

(2)

हवा बसंती बौराई

गुन-गुन गुंजित भ्रमर गीत सुन
कली सुंदरी मुस्काई,
फागुन के आने की सुनकर
हवा बसन्ती बौराई !!

दश दिश झूमे नव-नव पल्लव
कूक कोयलिया विहगन कलरव
हरित ओष्ठ पादप लख शुकदल
पखियन पसार पीहू अकुलाई !
फागुन के आने की सुनकर
हवा बसन्ती बौराई !!

मंजरियाँ मधु-शीश उठाए
अजब सुवास मदिर बिखराए
महुआ गंधा पगी पुरवैया
चले बहकी-बहकी मदमायी
फागुन के आने की सुनकर,
हवा बसन्ती बौराई !!

मन मतवाला बहका जाए
तन फूलों संग महका जाए
लगा लुटाने प्रखर रंग रवि
उषा सुंदरी शरमाई !
फागुन के आने की सुनकर
हवा बसन्ती बौराई !!

स्वप्ननिमिलित खग प्रणयी की
उत्कंठा उद्दाम मिलन की
प्रकृति से लिपटे मन्मथ पर
शत सहस्त्र चढ़ी तरुनाई !
फागुन के आने की सुनकर ,
हवा बसन्ती बौराई !!

❖❖❖

संपर्क : pathakkanchan239@gmail.com

स्वेटर

-मिताली मासूम

सुनो ना,
सर्दियाँ आ गयी हैं
और ठण्ड इस कदर
फैला रही है अपनी चादर
मानो अगली सर्दियों का तोहफा
इसी बरस दे जायेगी...
हर बार की तरह
इस सर्दी का असर भी
तुम्हारे बिना ही झेलना है,
कि अब तो हो चुकी है आदत
शाम को छत पर अकेले बैठ कर
बारिश की बेहिसाब बूंदें गिनने की
और घने कुहासे में हर सुबह
तुम्हारा अक्स ढूँढने की...
चाय के कप भी अक्सर
दो बार पी लेती हूँ,
खुद को देनी पड़ती है कम्पनी
तुम्हारे ही बदले
कि तुम्हें कोई मेरे सिवा
जानता जो नहीं...
कुछ दिन हुए हैं
जामुनी रंग का स्वेटर
तुम्हारे लिए बुनते हुए,
जानती हूँ मैं
तुम्हें कितना पसंद है
गहरा जामुनी रंग...
आज भी मेरे जेहन में
गुजरे जमाने की रंगत लिए
एक तस्वीर झलकती है,
जब साइकिल पर
बीस किमी की दूरी तय कर
तुम चुन-चुन के लाते थे
खूब रसीले जामुन
और खाते हुए जब रंग जाती जीभ
तो तुम छेड़ते हुए कहते-
हमारे प्यार का रंग भी
जामुनी रंग की तरह
कभी मद्धम ना होगा...
इसलिए सोचा है,
क्यों न इन सर्दियों में दूँ
तुम्हें जामुनी मुहब्बत से लबरेज
एक जामुनी रंग का स्वेटर,
जिसमें हर रोज बुनती हूँ मैं
सैकड़ों महकते जज़्बात...
कुछ फंदे प्यार के,
कुछ विश्वास के,
कुछ अनकही उम्मीदों के,
कुछ हर पल की शिकायतों के
और बाकी ढेर सारी यादों के,
कि ये ना हुए तो
जामुनी मुहब्बत का गाढ़ापन न टिकेगा
और स्वेटर में सर्दियों से लड़ने को
मेरे जज़्बातों की गर्मी न रहेगी...

संपर्क : 09760223319

❖❖❖

नये वर्ष का हुआ आगमन...

-विनोद पाण्डेय

नये वर्ष का हुआ आगमन, आ मिलकर हम खुशी मनायें ।
गम को भूल हँसे -मुस्कायें, गीत प्रीत के सुने-सुनायें ।

यही दुआ है नये वर्ष में, नये रंग में तुम इतराओ,
नई सुबह हो,नयी शाम हो,नये स्वप्न से नैन सजाओ,
नई उमंगे, नया हर्ष हो,जोश नया हो तन-मन में,
नये भाव का सृजन करो तुम, हृदय सरीखे उपवन में,
प्रेम के दीए जलाकर दिल में, नफरत दिल से दूर भगायें ॥
गम को भूल....

दिन आता है, दिन जाता है,जग की रीत पुरानी है,
रह जाती है बस यादें बाकी सब आनी जानी है,
दिवस, महीना, साल बीतता,नया वर्ष फिर आता है,
दिन का एक एक अनुभव हर बार हमें समझाता है,
धीरज रख कर अंतर्मन में, मेहनत करें, सफलता पायें ॥
गम को भूल....

जीवन इक-इक पल से बनता, हर पल में जीना सीखो,
अमृत, विष सब कुछ मिलते है, हँस कर के पीना सीखो
कोई सुखी है, कोई दुखी है, जीवन का अभिसार यही,
सब ईश्वर की मर्जी इस पर, अपना कुछ अधिकार नहीं,
जिन्हें रुलाया है जीवन नें, चलो उन्हें हँसना सिखलायें ।।
गम को भूल....

संपर्क : 09999047547

❖❖❖

गाँव से अम्मा आयी है

-इं॰ सुनील कुमार बाजपेयी

बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

उड़द, मूँग, अरहर की दालें कूट दराई कर,
चना और जौ के सत्तू की उचित मिलाई कर।
गुड़ की भेली, सिरका, बुकनू, कली खटाई की,
अलग-अलग पोटली बनाकर मनसे लायी हैं।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

इर्द-गिर्द मँड़राते बच्चे दादी कहते हैं,
छोड़ सभी कुछ साँझ-सबेरे सँग ही रहते हैं।
राजा-रानी के किस्से व गीता, रामायण,
चन्दा मामा कथा सुना अम्मा जी छायी हैं।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

अनुशासित हो गये सभी जन, सभी सचेत हुए,
पत्थर जैसा रहे कड़े हम, भुरभुर रेत हुए।
तरह-तरह की सीखें देतीं नीति बताती हैं,
अम्मा सबमें रची-बसी हैं सहज समायी हैं।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

पूजाघर में कब्जा उनका सीताराम जपो,
ध्यान लगाकर करो आरती राधे श्याम जपो।
आराधन वन्दन कीर्तन में ध्यान लगाकर वो,
चन्दन अगर धूप से सारा घर मँहकायी है।

बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

बैठाकर निज पास प्यार से सिर सहलाती हैं,
पीठ ठोंककर अम्मा मेरा धैर्य बँधाती हैं।
मुझपर मेरे बच्चों पर वो जान छिड़कती हैं,
गले लगा हम सबको अम्मा लगी अघायी हैं।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

बच्चों को सम्मुख बैठा संस्कार सिखाती हैं,
अपनी पुत्रवधू को सत् आचार सिखाती हैं।
परम्परायें अपने घर की जारी रखने में,
डाट डपट में भी अम्मा जी ना सकुचायी है।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

हमको उनकी उन्हें हमारी सख्त जरूरत है,
रहें हमारे संग बची सब ये ही सूरत है।
रचा बसा मन गाँव में उनका कैसे विरत करूँ,
अबकी अम्मा दिखती हमको कुछ कुम्हलायी हैं।
बड़े दिनों के बाद गाँव से अम्मा आयी हैं,
सोंधी-सोंधी खुशबू से तरबतर नहायी हैं।

❖❖❖

संपर्क : 8/361,
विकास नगर, लखनऊ
मो॰ : 9415189437

सुरेन्द्र अग्निहोत्री की तीन कविताएं

(1)

छोटे छोटे व्यौरों
चूहों, तिलचट्टों, मंकड़ों
रोजमर्रा के जीवने में आ रहे बदलावों
जीन्स, टॉप, कुरते पहने फैशनेबुल
लड़कियों की तरह
असभ्य, जंगली और जाहिल
खुशियों के क्षण की तलाश में भटकती पीढ़ी
जिनके लिए रक्त सम्बंध भी बेमानी हो जाता है
क्रूर, निर्मम और घनघोर स्वार्थी
व्यक्ति में परिणत हो जाते हैं
जादुई विकासवाद का आतंरिक चरित्र
अतीत के इतिहास बोध को खोलकर
व्यक्तिगत सुखों की लालसा देता
भूख से रिरियाना उन्हें
दयनीयता नहीं पाखंड लगता है
पैतृक गाँव, गंवई माँ-बाप
बदले मूल्य और अवधारणाओं में बेमानी है
रहट का पहिया और कुँआ की जगह
जीवन में आ गया बोतल का पानी है।
दूध सस्ता है पानी महंगा है
यही बाजार बाद की कहानी है।।

(2)

ओह!
मै, अपनी कल्पना में,
कहाँ-से कहाँ निकल गया?
मेरी आँखे आज भी
मूसलाधार बारिश
हवा के आघात से
आहत पेड़ की शाखाएं
काले-काले बादल खोज रही हैं
वे दिन कितने खुशगवार थे ?
बारिश में भीगते
नई कांपियों को फाड़कर
कागज की नाव बनाते
माँ-बाप की मार भी खाते
अब कितना कल्पनातीत लगता है
कागज का कश्ती
और वर्षा का पानी
लिखता था खेत-खलियानों में
जिन्दगी की नई कहानी
कहाँ चुक गई वह परम्परा पुरानी।

(3)

युद्ध अपराजेय रहा
न कोई हारा, न कोई जीता
सूरज डूब गया।
बिल्कुल अभी-अभी
सूर्य के अस्त होने की
अनदेखी होगी जब जब
वैसे ही निष्कर्ष सामने आयेंगे
उन संकेतों को समझना
इतना आसान नहीं है
जरा सोचिए!
सपने अपनी ही आँखों में
जब डूब जाते हैं
तो फिर कभी
लौटकर नहीं आते हैं
पंक्षी घोसला छोड़कर
जब चले जाते हैं
लौटकर फिर
वापिस नहीं आते हैं।

सपंर्क : 09415508695

❖❖❖

मधुवेश की ग़ज़लें

(1)

अँधेरा भी न था जब झोंपड़ी धू-धू जली अपनी
मुँडरों पर खड़ी थी दोस्तों सारी गली अपनी

कई बच्चे यहाँ के हो गये होते सचिन, वीरू
लगाने ही नहीं देती उन्हें छक्के गली अपनी

हमारा नाम सुनकर लोग कोसों दूर से आए
हमारे नाम से वाक़िफ हुई उस दिन गली अपनी

इधर जंगल उधर जंगल जिधर देखो उधर जंगल
बसाई इस जगह क्या सोचकर तुमने गली अपनी

न बिजली है न पानी है न सड़कें हैं न विद्यालय
दिखाएँ तो दिखाएँ क्या किसी को हम गली अपनी

दिखाई दे जहाँ पर आपको टूटी हुई पुलिया
वहाँ से दो कदम ही सिर्फ आगे है गली अपनी

यहाँ के लोग बेमतलब किसी से भी नहीं मिलते
कि अपने काम से ही काम रखती है गली अपनी

(2)

तीर खाकर जो पखेरू पड़पड़ाकर रह गए
फिर उठे फिर-फिर उठे फिर फड़फड़ाकर रह गए

देर तक आवाज अपनी जब न लौटी एक भी
जोर से एक और दी फिर बड़बड़ाकर रह गए

देखकर बेकार हाथों को सड़क पर फैलते
कान में कुछ कारखाने पड़पड़ाकर रह गए

दौड़कर बच्चे नहाने लग गए बारिश में फिर
हाथ बूढ़े लाठियाँ बस खड़खड़ाकर रह गए

भागते भी वो निहत्थे लोग आखिर कब तलक
जब अचानक बम गिरा तो हड़बड़ाकर रह गए

देर से भूखे बिलौटे एक टुकड़ा देखकर
देर तक लड़ते रहे फिर लड़लड़ाकर रह गए

हौसला था जोश भी था और थी उम्मीद भी
जीत के बादल मगर बस गड़गड़ाकर रह गए

सपंर्क : 08750883732

निवेदन

पारस–परस पूरी तरह से एक गैर–व्यावसायिक पत्रिका है। इसका एकमात्र उद्देश्य काव्य के माध्यम से हिन्दी कवियों के पैगाम को जन–जन तक पहुंचाना है। इस पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं के साथ रचनाकारों का नाम और उनसे संबंधित उचित जानकारी दी जाती है जिससे रचनाकार को उचित श्रेय मिलता है। इतना ही नहीं, हम प्रत्येक अप्रकाशित/मौलिक रचना के प्रकाशन से पूर्व संबद्ध रचनाकार/कॉपीराइट धारक से लिखित/मौखिक अनुमति का भी भरसक प्रयास करते हैं । फिर भी यदि किसी रचनाकार, कॉपीराइट धारक को कोई आपत्ति है तो उनसे अनुरोध है कि वह हिन्दी काव्य के प्रचार–प्रसार को ध्यान में रखते हुए, इस पत्रिका के योगदानकर्त्ताओं से हुई भूलवश गलती को क्षमा कर दें। मौलिक/अप्रकाशित रचनाओं के कॉपीराइटधारक अपनी आपत्तियाँ paarasparas.lucknow@gmail.com पर मेल कर सकते हैं ताकि पत्रिका के आगामी अंकों में उनकी रचनाएं प्रकाशित करने से पूर्व लिखित अनुमति सुनिश्चित की जा सके और इस संबंध मे आवश्यक कानूनी पहलुओं को ध्यान में रखा जा सके।

इस कार्य को **पारस–बेला न्यास** द्वारा जन–जागरुकता और जनहित की दृष्टि से किया जा रहा है। **इस पत्रिका को प्राप्त करने के लिए संपादकीय कार्यालय से संपर्क कर सकते हैं।**

मेरी बात और है

-डॉ. चन्द्रसेन

(1)

तेरी बात और है, मेरी बात और
मैं वफा का पुजारी, तेरी घात और
तू लुटेरा ना सही, लुटेरों का हमराही है
तेरी छूट और है, मेरी लूट और
मेरे जागने से वो, परेशां है इस क़दर
उसका हंसना और है, मेरा जागना और
वो मेरी मेहनत को, नशे की नज़्र करता रहा
उसकी नफरत और है, मेरी मेहनत और
वो पद और मैं, शोहरत को तरजीह देता रहा
उसकी तासीर और है, मेरी तरजीह और
वो मुझसे पद में बड़ा सही, उससे बड़ा हूँ मैं
उसका बड़प्पन और है, मेरी उंचाई और
वो बड़ा होकर, छोटों से नफरत करने लगा
उसकी नफरत और है, मेरी उल्फत और
तू मेरी तरह इंसानियत, का पाठ पढ़ तो ज़रा
तेरी हैवानियत और है, मेरी इंसानियत और
वो पल भर की शोहरत, को हो रहा मोहताज़
उसकी दौलत और है, मेरी शोहरत और ।

(2)

नफरत

अब तो हालात बदलने की बात कर
नफरत दिलों से मिटे, ऐसी ही बात कर

उमंगों को दुश्मनी के, हवाले करने वाले
शराफत से सोच, मत इधर-उधर की बात कर
अब तो हालात बदलने की बात कर
महज़ उम्र के बढ़ जाने से, तर्जुबात नहीं आते
ज़िंदगी से आँख मिला, मत उजड़ने की बात कर

अब तो हालात बदलने की बात कर
कब तलक यूं ही चलेगा, ये दौर-ए-दुश्मनी
दिल से दिल मिले, ऐसे ख़्यालात की बात कर

अब तो हालात बदलने की बात कर

जानता हूँ तू खुदा की, अदालत में ख़ामोश होगा
इस आख़िरी वक़्त में, तू इंसानियत की बात कर
अब तो हालात बदलने की बात कर
नफरत दिलों से मिटे, ऐसी ही बात कर

सपंर्क : 09899476828

❖❖❖

इसलिए बेचैन हूँ...

फिर भँवर में है सफ़ीना, इसलिए बेचैन हूँ
हो गया ज़ाया पसीना, इसलिए बेचैन हूँ

फिर ठिठुरती रात में फुटपाथ पर होगा ग़रीब
आ गया फिर वो महीना, इसलिए बेचैन हूँ

फिर सुना है सरहदों पर बढ़ गईं सरगरमियाँ
फिर से होगा चाक सीना, इसलिए बेचैन हूँ

सीख पाया मैं नहीं अब तक मुआफ़ी का हुनर
है अभी सीने में कीना, इसलिए बेचैन हूँ

आ गये हैं लौटकर सब चूम कर मिट्टी 'रियाज़'
मैं न जा पाया मदीना, इसलिए बेचैन हूँ

-राजीव 'रियाज़' प्रतापगढ़ी
संपर्क : 09278378119

वाणी-वन्दना

-ब्रजवंश मिश्र

हे माँ - सरस्वतिः शारदे ।।

कुन्द शशि-तुष-हार धवलाः
शुक्ल-शुचि पट पीत नवला
ज्ञान का अम्बार दे।।

कर-कमल वीणा संयुत्ता,
वर शुभ्र अम्बुज संस्थिता,
तारिणी-भवतार दे ।।
शरद अम्बुज तू सुवदना
सभल-सद्गुण-ज्ञान सदना,
ज्ञानिनी नव ज्ञान दे

विपुल मंगल दान शीला,
भक्त-भय भव बंधलीला
मोक्ष मंत्रोच्चार दे--
सरस वीणावादिनी माँ
विनय विद्यादायिनी माँ
बुद्धि-वैभव दान दे
कमल नयना जगन्माता,
विश्व से माँ अजब नाता ।
पुत्र को मधु प्यार दे

चरण-रज मैं हूँ तुम्हारा,
साथ ही माँ पुत्र प्यारा ।
आशीष तू शत बार दे
हे माँ -सरस्वति शारदे।

संपर्क : मोती हारी, बिहार

जागते लबों पे...

-सतीश मिश्र

जागते लबों पे उफनते जज़्बात
अब तो तन्हा नहीं कटती ये रात

शोख आँचल में लरजते तेरे फूल
जिस्म से निकली महकती कोई रूप

आ ! के धड़कने साँस ले दम ले ज़रा
गुंचए शाखे लगें मद्धम ज़रा

माहताबे नूर ने ली करवटें
अपने दामन में न कोई सिलवटें

झील का पानी भी अब तो रूक गया
आँसू की बूंदों से गर्दन झुक गया

देख ! कैसे देख मुझको देखते
ऐसे आलम में हया तो भेज दे

मुझसे हुस्नों इश्क़ ने रंजिश किये
बेकली की मार दामन भर दिये

चाँद भी अब तो सनम सोने चला
ऐसी कातिल रात से तो दिन भला

इन्तज़ारे हद भी अब घबरा गई
मुन्तज़िर आँखे भी अब पथरा गईं

रेत का सीना भी छलनी हो गया
सुर्ख़ अश्क़ों ने उसे पिघला दिया

संपर्क : 09911948694

स्वाइन फ्लू

-डॉ॰ एस॰ सी॰ गुरूदेव

जनबल धनबल ज्ञानबल सब, धरा धरा रह जाता है ।
स्वाइन फ्लू अपना असली, जब आतंक दिखाता है ।।
गर्भवती वजन में भारी, कुछ अधिक प्रभावित होते है।
फिर भी बच्चों से बूढ़ों तक, कोई छूट न पाता है ।।

अब तक है इसकी चपेट में, कुल एक सौ छबंबीस देश ।
लगभग दस लाख से ज्यादा, को पर हो चुका है क्लेश ।
नब्बे प्रतिशत के लिए नहीं, कुछ खास इलाज जरूरी ।
चन्द दवायें होतीं काफी, करें चिकित्सक जिन्हें पेश ।।

सर्दी, तेज बुखार होना, स्वाइन का भान दिलाता है ।
पर प्रयोशाला मुहर बिना, रोग नहीं कहलाता है ।।
पहले पहल रोग यह फैला, स्वाइन से मैक्सिको में ।।
अब मनुष्य से ही मनुष्य में, फैलता चला जाता है ।।

स्वाइन फ्लू का वायरस, एचवन, एनवन कहलाता है ।
इन्फ्लुयेन्जा टाईप ए से, जो खुद जोड़ बनाता है ।।
अब इसका विस्तार फैलकर, पहुँच गया इन्सानों तक ।
हाथ मिलाने पास फटकने, तलक से फैल जाता है ।।

है नहीं बात घबड़ाने की, ना होय इलाज जरूरी ।
घर के बाहर जाते समय, मुँह व नाक ढाँक ले पूरी ।।
यदि चाहो तो तुम ले सकते, हो एण्टीवायरल पहले ।
पर गुरूदेव जरूरत पर, मत रखना दवा से दूरी ।।

संपर्क : 08127934756

❖❖❖

चैन की बंशी बजेगी हरदम

-बुद्धराम 'विमल'

चैन की बंशी बजेगी हरदम भारत विश्व में छायेगा ।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।
खुशियों की बहाली होगी, घर-घर में दीवाली होगी ।
वर्षा होगी धन दौलत की नहीं कहीं कंगाली होगी ।।
सार जहाँ से सुन्दर अपना देश है जन-जन गायेगा ।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।
सब में भाईचारा होगा, द्वेष भाव का जहर घटेगा ।
ऊँच-नीच और दीन-अमीर व जाति-पाँति का भेद मिटेगा ।
रोटी-बेटी का भी रिश्ता जन-जन में हो जायेगा ।।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।

अपनेपन की बातें होंगी, परोपकार का भाव जगेगा ।
भ्रष्टाचार से फ़रत होगी, कोई किसी को नहीं ठगेगा ।।
ममता समता नीति न्याय का ही परचम लहरायेगा ।।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।
ढोंग अंधविश्वासों का मिट जायेगा नामोनिशान ।
श्रम विवेक की पूजा होगी, घर-घर में होगा विज्ञान ।।
जो शोषित है आज यहाँ एक शासन वही चलायेगा ।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।

पीछे न रहेंगी महिलाएँ, हर क्षेत्र में नाम कमायेंगी ।
साथ-साथ मिलकर मर्दों के भारत भव्य बनायेंगी ।।
'विमल' स्वप्न साकार बनेगा, देश महान कहलायेगा ।
एक दिन ऐसा आयेगा ।।

संपर्क : 09793441976

❖❖❖

प्रणय की देवी का प्रतिबिंब

-बिजेन्द्र कुमार अभ्भी

तुम प्रणय के पात्र हो,
विष भी भरा हो जो अगर,
वह सोमरस बन जाएगा ।
होगा नशा ता उम्र तक,
जब मैं उसे पी जाऊँगा ।

प्रेम सिंधु अवतरित देवी हो तुम,
स्वर्ग से उतरी अप्सरा तुम,
अमृतमई रसधार हो तुम,
नाव की पतवार हो तुम।

जानता हूँ हो नहीं कमज़ोर तुम,
हैं भरे तरकश में तुम्हारे,
अनगिनत विष बुझे तीर,
जो अगर चल जाएँ कहीं,
तो दें कलेजा चीर ।

जानता हूँ यह भी,
है पास तुम्हारे खण्डर,
और दो धारी तलवार ।
है अचूक निशाना ऐसा,
कभी खाली जाए न वार ।

तुमने जो पूछ लिया मुझसे,
कौन सा विषपान करोगे ।
होगा उत्तर मेरा यह,
हाथों से अपने जो दोगे ।
हो वह कोइ भी हलाहल,
गट से पी जाऊँगा मैं ।

और पीते ही,
धरती पर गिर जाऊँगा मैं ।
जो सदियों तक भी न खुले,
एक गहरी नींद सो जाऊँगा मैं ।
फिर भी,
पास में तुमको पाऊँगा मैं ।

निष्कपट, निश्छल सहृदया हो तुम,
सौम्यता की मूरत हो।
सहनशीलता की देवी हो तुम,
मनमोहक चन्द्रकिरण हो।
पर हो काली घटाओं की दामिनी भी,
गिर जाए अगर, भस्म कर दे।

रह जाएगा न अस्तित्व,
उड़ जाएगी राख हवा में,
फिर भी आती रहेगी आवाज़ कहीं से,
जो था तुम्हारा कभी,
रहेगा तुम्हारा ही चिर काल तक,
बहती पवन में पुष्प गंध सा

संपर्क : 07838389950

❖❖❖

उत्तर प्रदेश राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान' का 'पुरस्कार एवं सम्मान समारोह

15 मार्च, 2015 को 'राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान', उ0प्र0 के तत्वावधान में 'पुरस्कार एवं सम्मान समारोह' वर्ष 2014-15 का आयोजन 'विश्वेश्वरैया प्रेक्षागृह, लोक निर्माण विभाग राजभवन के सामने, महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ, में किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रो0 अभिषेक मिश्र, मा0 राज्य मंत्री, व्यावसायिक शिक्षा एवं कौशल विकास विभाग, उ0प्र0 थे। समारोह के अति विशिष्ट अतिथि जाने माने गायक पद्मश्री श्री अनूप जलोटा जी, श्री जयशंकर मिश्र, सेवानिवृत्त अधिकारी, भारतीय प्रशासनिक सेवा, विशिष्ट अतिथि श्री नरेन्द्र कुमार चौबे, प्रमुख सचिव, उ0प्र0 विधान परिषद एवं श्री हर्षवर्धन अग्रवाल, फाउन्डर ट्रस्टी, हेल्प यू ट्रस्ट, हजरतगंज, लखनऊ थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता डा0 हरशरण दास, प्रमुख सचिव, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, उ0प्र0 शासन द्वारा की गयी। कार्यक्रम में संस्थान के सह संरक्षक श्री अनीस अंसारी भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम का शुभारम्भ मा0 अध्यक्ष एवं मुख्य अतिथि विशिष्ट अतिथिगण द्वारा माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुआ। इसके पश्चात श्री घनानन्द पाण्डेय 'मेघ' द्वारा वाणी वन्दना प्रस्तुत की गयी। संस्थान के वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद' द्वारा साहित्यकारों एवं अतिथियों का स्वागत किया गया। इसके पश्चात संस्थान की गतिविधियों के साथ प्रगति आख्या डॉ0 दिनेश चन्द्र अवस्थी, महामंत्री द्वारा प्रस्तुत की गयी।

इस अवसर पर मा0 राज्य मंत्री प्रो0 अभिषेक मिश्र ने कहा कि साहित्य वैचारिक क्रान्ति का बीज बोता है। प्रमुख गायक कलाकार पद्मश्री श्री अनूप जलोटा जी ने संस्थान के कार्यों की प्रशंसा करते हुए भजन सुनाया।

संस्थान के सह संरक्षक डॉ0 अनीस अंसारी ने कहा कि साहित्य और समाज का बहुत करीबी रिश्ता है। साहित्यकारों को समाज को जोड़ने में साहित्य का उपयोग करना चाहिए।

प्रमुख सचिव विधान परिषद श्री नरेन्द्र कुमार चौबे ने कहा कि साहित्य समाज की आत्मा है,

संस्थान के अधयक्ष डा0 हरशरण दास ने कहा कि संस्थान बहुत अच्छा कार्य कर रहा है यह न केवल राज्य कर्मचारियों को प्रोत्साहित करता है वरन साहित्य के माध्यम से समाज की सेवा करने के अपने उदेश्य की भी पुर्ति कर रहा है। संस्थान के महामंत्री डॉ0 दिनेश चन्द्र अवस्थी ने कहा कि हमें बेहद खुशी होती है कि हम शासकीय सेवाओं के साथ साथ साहित्य सेवा में भी रत हैं। साहित्य की सेवा उत्तम सेवा है। इसके लिए साहित्य से जुड़े अधिकारी एवं राज्यकर्मचारी लगातार आदर एवं बधाई के पात्र हैं। उन्होंने संस्थान की प्रगति के सम्बन्ध में आरम्भ से लेकर अबतक की जानकारियाँ प्रदान कीं।

मुख्य अतिथि द्वारा संस्थान की पत्रिका 'अपरिहार्य' के 'पुरस्कार एवं सम्मान विशेषाँक', श्रीमती शोभा दीक्षित 'भावना' के गजल संग्रह 'जिन्दगी तेरे लिए', डॉ0 कैलाश निगम की कृति 'दीवान-ए-कैलाश निगम', श्री दयानन्द जड़िया 'अबोधा' की कृति 'ये हैं अबोधा के नवीन छन्द', श्री सत्य प्रकाश सक्सेना की कृति 'मदशाला' एवं डॉ0 रश्मिशील द्वारा सम्पादित कृति 'अनुभव की सीढ़ी' डॉ0 भारतेन्दु मिश्र की कविताओं का संकलन का लोकार्पण भी किया गया।

इसके पश्चात इस आयोजन का मुख्य पुरस्कार एवं सम्मान का सत्र प्रारम्भ हुआ। अतिथिगण द्वारा साहित्यकारों को पुरस्कार एवं सम्मान प्रदान किये गये-

पुरस्कृत किये गये साहित्यकारों की सूची

1. पं0 महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार : डॉ0 जटाशंकर त्रिपाठी,
2. सुमित्रा नन्दन पंत पुरस्कार: डॉ0 अशोक अज्ञानी
3. अमृतलाल नागर पुरस्कार: डॉ0 सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय,
4. जय शंकर प्रसाद पुरस्कार: श्री ओम धीरज
5. डॉ0 विद्यानिवास मिश्र पुरस्कार: श्री अमिताभ पाण्डेय,
6. डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' पुरस्कार : श्री उमाशंकर यादव 'निशंक'
7. मिर्जा असदउल्ला खाँ 'गालिब' पुरस्कार : श्री मोहम्मद अशरु
8. फिराक गोरखपुरी पुरस्कार: श्री मोहम्मद फारूक,

संस्थान की पत्रिका 'अपरिहार्य' एवं संस्थान को अमूल्य योगदान देने हेतु निम्नलिखित साहित्कारों को **साहित्य गौरव सम्मान** से सम्मानित किया गया।

श्री रवीन्द्र नाथ तिवारी,	डॉ0 गणेश नारायण शुक्ल (उन्नाव)	श्री रमेश गुप्त
श्रीयुत् श्रीकृष्ण सिंह 'अखिलेश'	डॉ0 कृष्णा जी श्रीवास्तव	श्री बजरंगबली
श्री राम प्रकाश त्रिपाठी प्रकाश	श्री मयंक किशोर शुक्ल 'मयंक'	डा0 आनन्द ओझा
डॉ0 सुरेश पति त्रिपाठी	श्री सुरेन्द्र कुमार अग्निहोत्री	श्री हरि मोहन बाजपेयी 'माधव'
श्री शाहनवाज कुरैशी	श्री कमलेश मौर्य 'मृदु'	श्रीमती इन्द्रासन सिंह 'इंदु'
श्री शिवकुमार बिलगरामी	श्री धान सिंह मेहता 'अनजान'	श्री मनीष कुमार
श्री ओम प्रकाश गुप्त 'मधुर'	श्री सुरेश पंजम	

- पारस परस प्रतिनिधि

सृजन-स्मरण

नरेश मेहता

(जन्म : 15 फरवरी, 1922 ; निधन : 22 नवम्बर, 2000)

सोने दो
महाशव बने इस चिद्‌बिन्दु को सोने दो।
ब्रह्माण्डों की पराविस्तृति में
कहीं भी, किसी में भी
न कहीं सूर्यों के भी सूर्य वाले तारे हैं
न कहीं नभगंगाएँ हैं
और न कहीं नक्षत्रमालिकाएँ ।
सारे प्रकाशों की मृत्यु हो चुकी है
सारी ध्वनियाँ पथरा चुकी हैं
महाकाल के इस पराकृष्णगर्त में
सारे व्योमकेशी देश और काल
नामहीन, आयुहीन, परिचितिहीन बन कर
न जाने कहाँ
न जाने किस देश और काल में बिला गये हैं।

– नरेश मेहता

सृजन - स्मरण

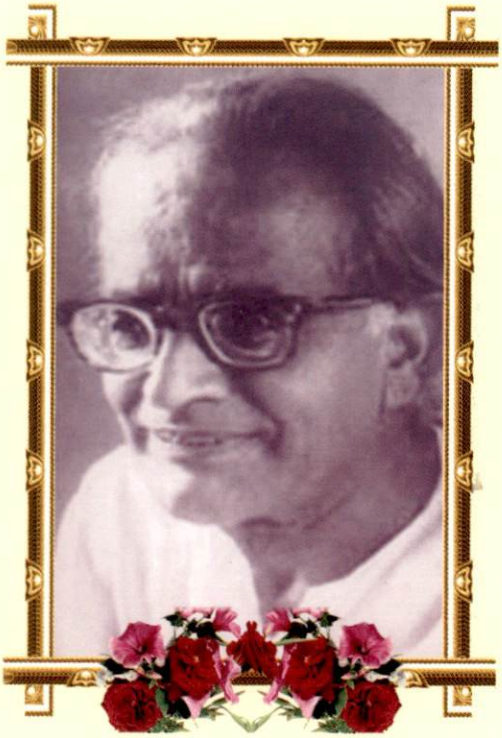

शमशेर बहादुर सिंह

(जन्म : 13 जनवरी, 1911 ; निधन : 12 मई, 1993)

हृदय का परिवार काँपा अकस्मात
भावनाओं में हुआ भूडोल–सा :
पूछता है मौन का एकांत हाथ
वक्ष छू, यह प्रश्न कैसा गोल–सा :
प्रात–रव है दूर जो "हरि बोल!"–सा,
पार, सपना है–कि धारा है–कि रात ?
कुहा में कुछ सर झुकाए, साथ–साथ,
जा रहा परछाइयों का गोल–सा ।

– शमशेर बहादुर सिंह